श्रुत निर्झरी

''प्रवचनकार''

एलाचार्य श्री वसुनंदी जी मुनिराज

प्रकाशक:

श्री सत्यार्थी मीडीया

रविन्द्र भवन इन्द्रा नगर टूण्डला चौराहा

फिरोजाबाद (उत्तर प्रदेश)

ॐ ह्रीं नमः

प्रथम संस्करण : नवम्बर 2014

प्रतियाँ : 2,000

श्रुत निर्झरी

एलाचार्य मुनि वसुनंदी

मंगलाशीष:

प.पू. राष्ट्रसंत, सिद्धांत चक्रवर्ती दि. श्वेतपिच्छाचार्य श्री १०८ विद्यानंद जी मुनिराज

श्री सत्यार्थी मीडीया प्रकाशक

रविन्द्र भवन इन्द्रा नगर टूण्डला चौराहा

फिरोजाबाद (उत्तर प्रदेश)

मुद्रक :जैन रत्न सचिन जैन ''निकुंज''

मो. 9058017645

प्रस्तुत पुस्तक में मुद्रित समस्त सामग्री, आवरण पृष्ठ, चित्रादि के सम्बन्ध में प्रकाशक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। इसके किसी भी अंश को पूर्व में बिना लिखित अनुमति के मुद्रित करना या करवाना, कॉपीराइट नियमों का उल्लंघन होगा, जिसका सम्पूर्ण दायित्व उन्हीं का होगा और हर्जे – खर्चे के लिए स्वयं जिम्मेदार होंगे ।

रुपये 40/-

संपादक की कलम से

मुनि ज्ञानानंद

आदित्यातप से संतापित संसारी प्राणियों के तन शान्त करने में वर्षाकालीन श्याम घनों से बरसती हुई अजस्र मूसलाधार मेघ मालाएँ ही समर्थ हो सकती है ग्रीष्मकालीन किंचित जल बुछारें नहीं।दीर्घ काल से बिछुड़े हुए शिशु को मातृ हृदय से निष्पन्न वात्सल्य का सागर ही संतुष्ट करने में समर्थ हो सकता है। नगर नारि का छल कपट से युक्त स्वार्थ पूर्ण प्रेम नहीं। चिरकाल से तृषित चातक को स्वाति नक्षत्र में वरषा हुआ मेघ जल ही संतुष्ट कर सकता है तालाब,नदी,कूप,वापिका व सागर का जल नहीं।सीप में स्वाति नक्षत्र में बरसती जल बिन्दु ही मोती बनने में समर्थ हो सकती है अन्य जल बिन्दु नहीं।कमलों को विकसित करने में सहस्रांशु दिनेश की रश्मियाँ ही समर्थ हो सकती है इन्दूद्योत की रमणीय किरणें नहीं और कुमुदनियों को सुधाकर ही विकसित संवर्द्धित व प्रफुल्लित कर सकता है मार्तण्ड का प्रचण्ड व प्रखर आताप नहीं।दीन-हीन निर्धन रंक मानव को यथेष्ट धन लाभ या मनोरथों की पूर्ति ही सुख-शान्ति में निमित्त हो सकती है,क्षणिक विषय भोगों का सेवन सच्चा सुख नहीं। आसन्न भव्य जीवों की प्रवृत्ति भी इसी प्रकार की होती है।आसन्न भव्य जीव सच्चे देव(वीतरागी,सर्वज्ञ,हितोपदेशी) सच्चे शास्त्र (जिनेन्द्र देव द्वारा प्रणीत गणधरों द्वारा संग्रहीत व मुनियों द्वारा लिपिबद्ध) तथा सच्चे निर्ग्रंथ यथाजात दिगम्बर संतो के प्रति निस्वार्थ समर्पण रूप सम्यक दर्शन को प्राप्त करने में समर्थ होता है।भव्य जीवों के परिणाम प्रभु परमात्मा के सन्निकट बैठ कर पूजा अर्चना करने के होते हैं।अरिहंतादि परमेष्ठी की भाव भक्ति युक्त उपासना अभव्य जीव सपने में भी नहीं कर सकते। सच्चे देव की उपासना भव्य जीव को परमात्म दशा तक पहुँचाने में समर्थ होती है। जिनवाणी का श्रवण पापों का संवर, सातिशय पुण्य का बंध, पूर्वबद्ध कर्मों की निर्जरा का कारण होता है।जो भव्य जीव जिनवाणी का भाव सहित आत्म हिताय पठन – पाठन, श्रवण, चिंतन – मनन, पृच्छना व धर्मोपदेश करता है। वह परमोत्कृष्ट श्रुतज्ञान को अर्थात् श्रुतकेवली की दशा को प्राप्त करता है। पुनः अवधिज्ञान, मनः पर्यय ज्ञान तथा क्रमशः केवलज्ञान रूपी अंतरंग लक्ष्मी को प्राप्त करता है। निर्ग्रंथ गुरूओं की सेवा – उपासना – आहारादि दान देने से सुन्दर व निरोगी शरीर, उत्तम संहनन व संस्थान की सम्प्राप्ति होती है। इतना ही नहीं कामदेव, बलभद्र, चक्रवर्ती व तीर्थंकर आदि चरमोत्तम पदों की प्राप्ति होती है।प्रस्तुत ग्रंथ "श्रुतनिर्झरी" लघु नाम कृति एलाचार्य गुरुदेव वसुनन्दी जी महाराज के लोकोपकारी प्रवचनों का संकलन है। ये प्रवचन मानवता के प्रहरी, एवं धर्म के प्रेरक निमित्त है।, सदाचार, सुसंस्कार, शिष्टाचार व सभ्यता की मंगल प्रेरणा देने वाले हैं।सभी पाठकगण उपरोक्त प्रवचनों को विशुद्धिपूर्वक पढ़ें, गुनें अच्छाइयों को चुनें यह हमारी भावना है।पू.गुरूदेव का मंगल आशीर्वाद उन्हें सदैव प्राप्त होता रहता है जो जिनशासन की प्रभावना व आत्म कल्याण में अहर्निश संलग्न हैं।जिन्होंने प्रस्तुत प्रवचनों का संग्रह करने में,पाण्डुलिपि संशोधन में,प्रकाशन में मुद्रण में सहयोग प्रदान किया है उन सभी गुप्त-गुरूभक्तों को गुरूजी का धर्मवृद्धि हेतु शुभाशीष।

णमोकार की जाप करो
अपनी रक्षा आप करो

अनुक्रमणिका

सदाचार की महिमा
पृष्ठ संख्या 1

अमावस्या की रात्रि में प्रज्वलित दीप
पृष्ठ संख्या 19

कौन धनी त्रिशला के महल का
पृष्ठ संख्या 33

आई वान्ट पीस
पृष्ठ संख्या 49

घर को स्वर्ग कैसे बनायें
पृष्ठ संख्या 64

मीठे प्रवचन

''उत्साहित मन''

जीवन में उल्लास, उत्साह, उमंग व पापों से उदासीनता आवश्यक है, क्योंकि इसके बिना उन्नति का मार्ग प्रारंभ नहीं होता। जो पूर्वाग्रह, दुराग्रह व हठाग्रहों के मजबूत बंधनों में बंधे हैं वे आज तक कहीं भी नहीं पहुँच सके, आज भी उन्हीं बंधनों में कसे हैं जिनमें पहले कसे थे। जो मुक्तपक्षी की तरह गगन में लक्ष्य की ओर बढ़े हैं मंजिल ने उनके कदम चूमे हैं। उत्साह युक्त जीवन ही उल्लासित होता है, उमंग युक्त जीवन प्रतिपल नूतन व तनाव रहित होता है। विवेक पूर्वक प्रत्येक क्रिया को उत्साहित मन से करो। द्रव्य, क्षेत्र, काल के अनुसार वर्तन करो, यही सुखी जीवन का यथार्थ मार्ग है।

एलाचार्य वसुनंदी मुनि

सदाचार की महिमा

धर्मस्नेही सत् श्रद्धालु,

संसार में जो जन्मा है वह अपना जीवन अवश्य जीता है, चाहे पूरा जीवन जीये या अकाल मृत्यु आने से अधूरा जीवन जीये। जितने भी जीव संसार में जन्म लेते हैं सभी मरने से पहले जीते हैं, मरने के बाद उनका दूसरा जन्म होता है। वह जीते हैं पुनः मृत्यु को प्राप्त करते हैं, आप कहें हम जीवन जी रहे हैं, ये कोई बहुत बड़ी बात थोड़े ही है। जीवन संसार का कौन-सा प्राणी नहीं जी रहा है, यदि आप जीवन जी रहे हैं तब निःसंदेह आप कोई बहुत बड़ा काम नहीं कर रहे तिर्यंच भी जीवन जीता है, निगोदिया जीव भी जीवन जीता है, सभी जलचर, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पति कायिक भी जीते हैं। नारकी भी जीवन जीते हैं,वैमानिक भवनवासी, ज्योतिष, वाण

व्यंतर भी जीवन जीते हैं। भोगभूमि,कुभोग भूमि के जीव भी जीवन जीते हैं फिर आपके जीवन में और उनके जीवन में क्या अंतर रहा? यदि आप सभी में अपने आपको श्रेष्ठ, सम्मानीय, अभिनंदनीय, प्रशंसनीय, आदर्श प्रस्तुत करना चाहें तो मेरी दृष्टि में आपका तर्क अधूरा है। हाँ एक अंतर हो सकता है संसार के अन्य प्राणियों में और हम में, जीवन तो संसार का प्रत्येक प्राणी जीता है पर अच्छा जीवन कोई-कोई जीता है, अच्छा जीवन जीने वाले कम लोग हैं। अच्छा शब्द ये एक विशेषण है अच्छा जीवन कोई-कोई जीता है। अच्छा जीवन जीने वाले व्यक्ति संसार में पूज्यनीय होते हैं, सम्मानीय होते हैं, आदरणीय स्तुतित्य होते हैं, वही संसार के लिए आदर्श माने जाते हैं। 'अच्छा जीवन' कोई नारकी जीना चाहे वह नहीं जी सकता, अच्छा जीवन कोई एकेन्द्रियादि से चतुरीन्द्रियादि जीव जी ही नहीं सकते, क्योंकि उनके पास अच्छा-बुरा जानने की, भेद करने की प्रज्ञा ही नहीं है क्योंकि वहाँ मन ही नहीं है जिससे शिक्षा, अलाप, उपदेश तर्क बुद्धि आदि को वह ग्रहण कर सके। यह सिर्फ और सिर्फ मनुष्य के लिए ही सम्भव है वह अच्छा जीवन जीने का नाम है 'सदाचार'।

यह सदाचार, जिसके पास सदा चार बातें होती हैं। सदा अर्थात् सदैव ये चार बातें होती हैं वही सदाचार जीवन जी सकता है, सदाचार से युक्त उसका जीवन हो सकता है। ये चार बातें कौन सी हैं- शरीर से सत्क्रिया, वचनों से सद्व्यवहार, मन में सद्विचार और सत् आहार अर्थात् शुद्ध आहार, ये चार बातें जिसके जीवन में होती हैं वह सदैव सदाचारी होता है जिसके जीवन में यह चार बातें नहीं वह सदाचारी नहीं।

१. सत्कार्यः- सत्कार करना भी सत्कार्य है- सत्पुरुषों का ही आदर-सत्कार होता है। सत्कार्य का आशय होता है, चाहे प्रभु पूजा हो या गुरुसेवा, चाहे जिनवाणी की सेवा हो या उपासना, चाहे परोपकार हो, मैत्री हो, प्रमोदादि भावना आदि का चिंतन सब सत्कार्य हैं। तीर्थयात्रा भी सत्कार्य है, धर्म की प्रभावना करना भी सत्कार्य है, ज्ञान की उपासना करना भी सत्कार्य

है। आत्मा को आत्मा में लीन कर लेना, ध्यान आदि जितने भी कार्य हमें असत् से सत् की ओर ले जायें वे सभी सत्कार्य हैं, अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जायें, दुःखों से सुखों की ओर ले जायें, पाप से पुण्य की ओर ले जायें, अधर्म से उठाकर धर्म में ले जाये वे सभी कार्य सत्कार्य हैं। जो व्यक्ति सत्कार्य करता है उसका सत्कार होता है। वही अपनी आत्मा का सत्कार कर सकता है जो दूसरों का सत्कार करता है, और जिसकी आत्मा सत्कार के योग्य है वही आत्मा पूज्य है चाहें वह सत्कार्य करे या न करे फिर भी उसकी आत्मा पूज्य है। भगवान की पूजा तुम्हारी पूजा पर निर्भर नहीं है, भगवान की पूज्यता उनकी स्वयं की पूज्यता है। उन्होंने घातिया-अघातिया कर्मों को नष्ट किया, संसार से पार हुए इसलिए उनकी आत्मा पूज्य हो गई, तुम उनका अभिषेक पूजन करो चाहे न करो वह तो पूज्य है। कोई व्यक्ति कहने लगे- ''कि मैं मंदिर में पूजा करने न जाऊँ तो भगवान अपूज्य हो जायेंगे'' यह उसकी अल्पज्ञता है, मूर्खता है, किसी की पूजा करने न करने से कोई पूज्य-अपूज्य नहीं होता है। संसार का प्रत्येक व्यक्ति अपने ही गुणों से, अपने ही स्वभाव से, अपने ही धर्म से, अपने ही संयम चारित्र से पूज्यता को प्राप्त होता है। स्वयं में ही कोई विशेषता नहीं है, तो क्या दुनिया के पूजने से वह व्यक्ति पूज्य हो जाएगा? जो जैसा है वैसा ही रहेगा। कोई व्यक्ति किसी के स्वभाव को छीन नहीं सकता है, और किसी पर जबरदस्ती दवाब से थोप नहीं सकता।

यह शाश्वत सिद्धान्त है कि तुम्हारे स्वभाव को, तुम्हारे गुणों को, तुम्हारी पर्यायों को, तुम्हारी अच्छाइयों-बुराइयों को कोई छीन नहीं सकता। वह अपने अंदर प्रकट तो कर सकता है किन्तु छीन नहीं सकता, तुम्हें बुराई से अच्छाई की ओर ले जाने की प्रेरणा तो दे सकता है किन्तु तुम्हारे ऊपर थोप नहीं सकता जब तक कि तुम उसे स्वीकार न करो।

यदि सदाचारमय जीवन जीना है तो सबसे पहली शर्त है 'सत्कार्य' इसके बिना जीवन में सदाचार आ ही नहीं सकता, कोई व्यक्ति सोचे मैं संत-महात्मा बन गया और संत-महात्मा बन कर भी बुद्धिपूर्वक अन्य कार्य

करता हूँ तो क्या वह सदाचारी हो सकता है,? सत्कार्य किये बिना कोई सदाचारी हो ही नहीं सकता। जैसे ऊष्णता के बिना अग्नि हो ही नहीं सकती, शीतलता के बिना जल हो ही नहीं सकता, मिठास के बिना कोई मीठा हो ही नहीं सकता ऐसे ही सत्कार्य के बिना सदाचार हो ही नही सकता।

२. सद्व्यवहारः- सत्कार्य करना है तो सामने वाले के साथ सद्व्यवहार करना। सामने वाला चाहे कितना ही सत्कार्य करता हो, पूजा-पाठ स्वाध्याय आदि करता हो किन्तु भाषा इतनी कटु कि जब बोले तो लगे मानो अंगारे झड़ पड़े हों, करील के कांटे चुभ गये हों, इतनी कड़वी भाषा मानो किसी ने तेजाब ही डाल दिया हो, ऐसे शब्द बबूल के कांटे के समान, सुनकर ऐसा लगे कि किसी ने कान में शीशा पिघला कर डाल दिया हो। दूसरों से कटु वचन, निद्य वचन, कर्कश वचन बोले क्या वह सदाचारी हो सकता है?अर्थात् नहीं हो सकता।

व्यवहार इतना अच्छा हो कि व्यक्ति उस व्यवहार को याद कर तुम्हें याद करता रहे। एक व्यक्ति ट्रेन में यात्रा कर रहा था, दूसरा व्यक्ति अगले स्टेशन से चढ़ा और चढ़ते ही इतने बुरे अपशब्दों का प्रयोग किया जो उचित नहीं थे और बड़बड़ाता हुआ बैठ गया। किसी ने कुछ नहीं कहा, जब वह उतरने लगा तब ट्रेन में बैठे एक व्यक्ति ने उससे कहा- भईया! तुम्हारी कोई चीज रह गई है, वह लेते जाओ, तब उसने पूछा क्या रह गया? व्यक्ति ने कहा''आपका बुरा व्यवहार" व वचन जो कि इस ट्रेन में बैठे सभी व्यक्तियों को जीवन भर याद रहेंगे। जो व्यवहार तुमने किया है वह कोई भूल नहीं सकता है। बुरा व्यवहार और अच्छा व्यवहार व्यक्ति के जीवन में स्थाई छाप छोड़ने वाला होता है। व्यक्ति चला जाये किन्तु उसका व्यवहार जीवित रहता है, व्यक्ति के शरीर को भले ही लकड़ी के बीच में रखकर जला दो किन्तु उसका व्यवहार जलाये से जलता नहीं है। किसी के शब्द चुभ जायें तो क्या हृदय में से निकाले से निकल जाते हैं? तलवार का घाव तो भर जाता है किन्तु शब्दों का घाव नहीं भरता।

एक ब्राह्मण जंगल में चला जा रहा था, मार्ग में उसे शेर दिखाई दिया, शेर के पैर में कांटा लगा हुआ था, ब्राह्मण पहले तो डर गया किन्तु जब शेर को प्रार्थना, दया व याचना की दृष्टि से भरा हुआ देखा तो कृपा करुणा दृष्टि पाकर ब्राह्मण ने डरते-डरते कहा भाई शेर! तू है तो क्रूर हिंसक जानवर किन्तु तू यहाँ दुःखी खड़ा है बता मैं तेरी क्या सहायता करूँ? वह शेर लड़खड़ाते हुए ब्राह्मण के पास पहुँच गया। उसने उसे कांटा दिखाया, ब्राह्मण ने कहा- तू चाहे मुझे मार दे या कुछ करे मैं तेरा कांटा निकाल देता हूँ। मैं तो तेरे साथ भला ही करूँगा और कहकर शेर का कांटा निकाल दिया। (शेर आदमी की भाषा समझते हैं) शेर ने उसके प्रति बड़ी कृतज्ञता साबित की। ब्राह्मण ने कहा- मैं गरीब हूँ, लकड़हारा हूँ, लकड़ी काटकर अपना गुजारा चलाता हूँ। शेर ने लकड़ियों का गट्ठर अपनी पीठ पर रखवाया और उसके साथ चलने लगा, वह ब्राह्मण उसकी पीठ पर लकड़ी रखकर बेचने लगा और बहुत अमीर हो गया। एक दिन ब्राह्मण की लड़की की शादी थी उसमें बहुत सारे रिश्तेदार नगर के लोग आये थे, सबने पूछा तुम तो बड़े गरीब थे, आज इतना बड़ा भोज किया, कहाँ से तेरे पास सम्पत्ति आ गई? कहीं जमीन में गढ़ा मिल गया- बोला कुछ नहीं मैंने शेर पाल लिया। बोले शेर! तुम्हें डर नहीं लगता, वह बोला काहे का डर, शेर क्या है,वह तो कुत्ते जैसा है। अब ये शब्द शेर ने सुन लिये, शेर गुस्सा होकर वहाँ से चल दिया जंगल में। ब्राह्मण ने देखा मेरा प्रिय मित्र चला गया, वह उसे मनाने के लिए उसके पीछे गया, बोला चलो, शेर बोला - तुम चलो चर्चा बाद में करेंगे। वह ब्राह्मण बाद में आया बोला भाई क्या बात है- गलती हो गई मुझे क्षमा कर देना, बोला क्षमा एक शर्त पर करूँगा, एक कुल्हाड़ी उठा और मेरे सिर पर चोट मार, ब्राह्मण घबड़ा गया, कुल्हाड़ी!शेर बोला हाँ, ब्राह्मण बोला- मैं एसा नहीं कर सकता। शेर बोला नहीं किया तो मैं तुझे खा लूँगा। ब्राह्मण ने अपने प्राणों की रक्षा करने के लिए उसके सिर पर हल्की सी कुल्हाड़ी मार दी और उसका हल्का सा घाव हो गया। उसने ब्राह्मण से कहा है, तूने जो मेरे पैर में कांटा चुभा था उसे निकाला था, तेरा मैं

उपकार मान रहा था, इस कुल्हाड़ी के चोट का घाव तो भर जाएगा किन्तु तूने जो कहा था कि मैंने कुत्ता पाल रखा है, गधा सा है वह शब्द मुझे चुभ गये हैं वो घाव मेरा नहीं भरा है।

महानुभाव! वचन का घाव बहुत गहरा होता है, संसार में ऐसा कोई तीर नहीं है जो इतना गहरा घाव बना सके, जितना गहरा वचन का घाव होता है, उतना बाणों का नहीं। वाक्य प्रहार सबसे ज्यादा चोट पहुँचाते हैं।तो दूसरी शर्त है सद् व्यवहार। जो जीवन में सद्व्यवहार करता है नियम से उसे भी सद्व्यवहार मिलता है जो अपने जीवन में सदैव मिष्ट-शिष्ट बोलता है, उसे ही अपने जीवन में मिष्ट और शिष्ट वचन सुनने को मिलता है। नमक देकर मीठा खाने कहीं नहीं मिलता, दूसरे का गला पकड़ कर उसके मुँह में जबरदस्ती नमक मिर्च भर दो तो ये उम्मीद मत करना कि तुम्हारे मुँह में कोई जबरदस्ती रसगुल्ला डालेगा। तुमने नमक मला है किसी के दाँतों पर तो वह भी नमक से भयंकर कोई चीज मलने का प्रयास करेगा। तीसरी बात है:-

३. सद् विचारः- सद् विचार यदि तुम्हारे जीवन में आ गये तो समझो तुम्हारा जीवन ही बदल गया, तुम जो कुछ भी बनना चाहते हो पहले वैसा सोचना प्रारम्भ कर दो, वैसे बन जाओगे। व्यक्ति पहले भावों से वैसा बनता है तब द्रव्य में वैसी परणति होती है। कुम्हार मटका बनाता है, उससे पहले अपने मन में मटका बना लेता है, तब मिट्टी लगाकर बाद में मटका बनाना प्रारम्भ करता है। कोई व्यक्ति मकान बनाता है तो उससे पूर्व उसका नक्शा अपने दिमाग में खींच लेता है, माँ रोटी बनाने/रसोई बनाने के पहले सोच लेती है कि क्या-क्या बनाना है कि ऐसे दाल बनानी है, ऐसे सब्जी। पहले मन में बना लेती है तब बाद में बनाती है। पहले भावों में बनता है और व्यक्ति जैसा बनना चाहता है वैसा सोचना प्रारम्भ कर दे बस, कुछ भी न करो सोचते जाओ-सोचते जाओ एक दिन अवश्य ऐसा आएगा, जैसा तुम बनने का सोचते हो। तुम क्या हो हम नहीं जानते किन्तु आपके विचारों से हम जान सकते हैं कि तुम क्या हो? जैसे तुम्हारे विचार हैं वही तुम हो, जैसे तुम्हारे

वचन हैं वही तुम हो, जैसी तुम्हारी क्रिया है वही तुम हो, क्योंकि वचन क्रिया और विचारों के अलग तुम नहीं हो वचन, क्रिया, विचार तुमसे अलग नहीं हैं वे तुमसे अनस्यूत हैं, अखण्ड हैं, मिले हुए हैं। इसलिए तुम भी वही हो जो तुम्हारे वचन, विचार और क्रियायें हैं। यदि किसी मिष्ठान में मीठा पड़ा हुआ है तो मीठा तो उसमें है किन्तु, कोई कहे कि "मिष्ठान में मीठा तो पड़ा हुआ है किन्तु उसमें है नहीं", अरे ऐसा कैसे हो सकता है यदि मिष्ठान में मीठा पड़ा हुआ है तो वह मीठा ही है।

किसी में नमक पड़ा है तो वह नमकीन ही है, घी पड़ा है तो चिकनाई ही है। जो जिसमें है वह उसमें ही हो जाता है। विचार व्यक्ति के जीवन के निर्माण की आधार शिला होती है। व्यक्ति अपने विचारों को बदले, उसकी आदतें बदल जाती हैं, व्यक्ति अपने विचारों को बदले उसका व्यवहार बदल जाता है। व्यक्ति अपने विचारों को बदले उसकी क्रियायें बदल जाती हैं, उसके शरीर के सभी परमाणु बदल जाते हैं,वैज्ञानिक लोग भी कहते हैं "७ वर्ष में तुम्हारे शरीर के पूरे परमाणु बदल सकते हैं। बचपन में तुम्हारा शरीर कैसा था, ७ वर्ष के बाद पूर्ण रूप से बदला जा सकता है, यदि अपने पूरे माहौल को बदलते जाओ तो ७ साल बाद लोग तुम्हें पहचान न पायेंगे कि तुम वही हो या दूसरे हो। किन्तु महानुभाव! बदलने का केवल एक ही क्रम है वह है "विचार"विचार ही एक ऐसी चाबी है जिसके माध्यम से अंदर वाले सभी ताले खोले जा सकते हैं। विचार पहली चाबी है जिससे पहला द्वार खुलता है, पहला द्वार खुले तब तो आगे के द्वार खुलें। यदि विचारों को नहीं बदला तो कुछ भी बदलना शक्य नहीं है। महानुभाव! अगली चौथी बात है-

४. सदाहारः- सदाहार समीचीन, उचित, स्वास्थ्य के अनुकूल हो वह आहार इन सब का आधार है, यदि आहार अच्छा हो तो सब कुछ अच्छा होगा।

जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन, जैसा पीवे पानी वैसी होगी वाणी। तो खान-पान का प्रभाव पड़ता है, इसलिए कई बार कहते हैं आप अपना

खान-पान सुधारो तुम्हारा खानदान स्वतः ही सुधर जाएगा और जिसका खान-पान बिगड़ जाएगा उसका खानदान नियम से बिगड़ेगा। जिसकी रोटी शुद्ध है उसकी बेटी शुद्ध रहेगी। जिसकी रोटी अशुद्ध हो गयी उसकी बेटी अशुद्ध हो जायेगी। घर-घर में रसोई होना चाहिए और वह रसोई जिसमें रस होता है चाहे सूखे टिक्कर ही क्यों न हो, नमक सा खारा हो तब भी उसमें रस होता है, पहले रसोई में कोई जूते-चप्पल पहन कर नहीं जाता था, कोई बिना नहाये नहीं जाता था, किन्तु आज चौका ही नहीं रहा, जहाँ पर चार प्रकार की शुद्धि (द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव) होती थी लेकिन, आज तो किचन है जहाँ दिन-रात किच-किच मची रहती है। रसोई की शुद्धि हमारी अंतरंग की शुद्धि का कारण है, भगवान की मूर्ति यदि शुद्ध है तो भक्त का हृदय भी चमकता रहेगा यदि भगवान का शिखर कलश चमकता रहेगा तो भक्त की प्रतिष्ठा भी ऊँची रहेगी, यदि भगवान का शिखर, कलश ध्वजा खण्डित रहेंगे तो भक्त की प्रतिष्ठा भी खण्डित रहेगी। ऐसे ही जिसकी रसोई में कमी रहेगी उसके जीवन में कभी कोई पूर्ति कर नहीं सकता। जिसकी रसोई में बरक्कत रहती है उसके जीवन में भी बरक्कत रहती है और रसोई में कमी पड़ गई तो जीवन में बरक्कत नहीं हो सकती यदि कोई सोचे कि आठ व्यक्ति घर में हैं, पाँच का भोजन बना लें तो वे पाँच भी अपूर्ण रह जायेंगे। दस का भोजन बनाओ, एक-दो अतिरिक्त भी आ जायें तो वह भी खा ले। जो अपने परिवार के लिए पूरा न बना पाए, जिस महिला की रसोई में एक रोटी भी कम पड़ गई तो समझो वह अपने परिवार को दरिद्रता की ओर धकेल रही है, उसके घर में कंगाली स्थायी निवास कर रही है और जिस महिला की रसोई में सुबह-शाम एक-आध रोटी बचे भले ही गाय को देनी पड़े उस के घर में कभी भी कमी नहीं आती।

आहार शुद्ध होना चाहिए। शुद्ध आहार पर ही शुद्ध विचार आधारित होते हैं, शुद्ध आहार पर ही आधारित है सदव्यवहार, शुद्ध आहार पर ही आधारित है सत्कार्य, मांस खाने वाला व्यक्ति क्या दया का भाव रखेगा और

क्या जीव रक्षा का भाव रखेगा? खानपान का बहुत प्रभाव पड़ता है जैसा खाता है वैसा ही मांगता है यदि गन्दी चीज मांग रहा है तो उसका अंतरंग गंदा है, लोग कहते हैं-

"तनु जिन मंदिर"

''मन एक मंदिर है' लेकिन कब? जब मन्दिर में भगवान होता है तभी तो मंदिर कहलाता है, यदि कोई बिल्डिंग खड़ी कर दी, न वेदी है, न भगवान है, न शिखर है न ध्वजा है, न कलश है उसे मंदिर कहोगे क्या? कम से कम भगवान तो हो, बिना भगवान के मंदिर नहीं हो सकता। आपका मन भी मंदिर बन सकता है किन्तु तभी जब उसमें भगवान का वास हो, जिस मन में मार-काट चल रही है तो उसे मंदिर कहोगे क्या? वह तो बूचड़खाना कहना चाहिए, जिस मन में दुकानदारी चल रही हो उसे दुकान कहेंगे। जिस मन में जो चल रहा है वही तो तुम्हारा मन कहलायेगा। आपका मन, मंदिर जैसा कैसे हो गया? यदि इन्हें मंदिर कहोगे तो मंदिर को क्या कहोगे? महानुभाव! मन पर आधारित है तन और मन आधारित है आहार पर। वचन भोजन प्राप्त करता है आहार से, क्रिया भोजन प्राप्त करती है आहार से। आहार शरीर, मन व वचनों के लिए आवश्यक है। चेतना के लिए आहार आवश्यक नहीं है, कोई अवधिज्ञानी मुनि महाराज उपवास करके भी अच्छा ध्यान लगा सकते हैं किन्तु व्यक्ति यदि भोजन न करे तो शरीर शिथिल हो जाएगा, व्यक्ति यदि भोजन न करे तो ओजस्वी वाणी भी शिथिल हो जाएगी, मन धर्म ध्यान में न लगेगा। भोजन मन, वचन, काय तीनों के लिए जरूरी है। जैसा खाएगा वैसा ही तो निकालेगा।

जलेन जनितं पंकं,जलेनपरिशुद्ध्यति।
चित्तेन जनितं कर्म, चित्तेन परि शुद्ध्यति।।

जल से ही कीचड़ पैदा होती है और जल से ही कीचड़ धुलती है इसी प्रकार चित्त से ही कर्म पैदा होते हैं और चित्त से ही कर्म धुल जाते हैं। दीपक

क्या खाता है? दीपक अंधेरे को खाता है, इसलिए कालिमा को पैदा करता है, वह जैसा भक्षण करेगा, वैसा ही तो परिणाम आयेगा। यदि दूध शक्कर को खाएगा तो मीठा हो जाएगा, ऐसे ही हमारा शरीर, हमारा मन, हमारा वचन जैसा भी खाता है, वैसा ही हो जाता है तो इसलिए आहार पर बहुत जोर दिया, बिना आहार के कुछ नहीं है।

महानुभाव!ये चार बातें जिसके पास हैं उस ही के पास सदाचार है, जिसके पास ये चार बातें नहीं उसके पास सदाचार नहीं और आचार तो जीवन का प्राण है, प्राणों के प्राण हैं चेतना की चेतना है प्राणवायु की प्राणवायु है इसलिए आचार्यों ने बारह अंगों में से पहला अंग कौन-सा रखा पहला आचारांग बखानो, और पहले का बहुत महत्व होता है, चाहे पहले कोई भी चीज है- आपने देखा दस धर्मों में पहला कौनसा धर्म रखा- उत्तम क्षमा, पाँच महाव्रतों में अहिंसा, रत्नत्रय में सम्यक्दर्शन, इन्द्रियों में स्पर्शन, गुप्तियों में मनो गुप्ति, भावनाओं में अनित्य भावना, तीर्थंकर की १६ कारण भावनाओं में पहली भावना दर्शन विशुद्धि, प्रतिमाओं में दर्शन प्रतिमा, जो कुछ भी नम्बर एक पर रखा वह महत्वपूर्ण है, अहिंसा के बिना चारों व्रत बेकार हैं, अहिंसा नहीं तो सत्य नहीं हो सकता, अचौर्य व्रत नहीं, ब्रह्मचर्य नहीं हो सकता, ऐसे ही १६ कारण भावनाओं में दर्शन विशुद्धि नहीं तो १५ भावना नहीं हो सकती। अनित्य भावना नहीं तो बारह भावना नहीं, इसी प्रकार से स्पर्श इन्द्रिय पर विजय नहीं है तो अन्य इन्द्रिय पर विजय करना मुश्किल हो जाएगा। जैसे ये पहले-पहले महत्वपूर्ण होते हैं उसी तरह साधु के ७ आवश्यक कर्तव्यों में समता पहले है तो श्रावक के ६ आवश्यक में देवपूजा पहले है तो महानुभाव! आचारांग- क्या हैं, अंग अर्थात् हिस्सा,अवयव,पार्ट, द्वादशांग का पहला अंग है आचारांग, यदि वस्तु का पहला पार्ट ही न हो तो पूरी वस्तु ही अनुपयोगी है।या अपनी सार्थकता को प्रदान करने में असमर्थ है।जिस प्रकार सम्यग्दर्शन का प्रथम अंग निःशंकित है उसके अभाव में सम्यग्दर्शन संसार का उच्छेद नहीं कर सकता ।आ.समंतभद्र स्वामी ने रत्नकरण्ड श्रावकाचार में कहा है-

नांगहीनमलं छेत्तुं दर्शनं जन्मसन्ततिम्।
न हि मंत्रोऽ क्षरन्यूनो निहन्ति विषवेदनाम्।।

जिस प्रकार यदि मंत्र में एक भी अक्षर कम हो तो वह विष की वेदना को दूर नहीं कर सकता उसी प्रकार आठ अंगो में से एक भी अंग से हीन सम्यग्दर्शन संसार का उच्छेद करने में समर्थ नहीं है।जन्म की सन्तति को छेद नहीं सकता तो अन्य ७ अंग क्या कर सकेंगे। यदि शरीर के ऊपर का हिस्सा आनन, वदन चेहरा नहीं है तो पूरा शरीर ही बेकार है और चेहरा भी हो आँखे न हों तो चेहरा बेकार है। ऐसे ही आचारांग के बिना समझे ११ अंग भी कार्यकारी नहीं हो सकते।

सदाचार की आचार्यों ने स्तुति की है सदाचार को ही बंधु कहा, सदाचार को ही मित्र कहा, सदाचार को ही माता-पिता कहा, सदाचार को ही ज्ञान कहा,सदाचार को ही सब कुछ कहा, आचार ही एक ऐसी चीज है जिसके माध्यम से व्यक्ति के अच्छे-बुरे की पहचान होती है और अच्छा व्यक्ति वह है जो अच्छे कार्य करता है, वह नहीं जो सिर्फ अच्छी बात बोलता है,वरना अच्छी बातें तो दीवारों पर भी लिखी होती हैं। अच्छी बातें तो पुस्तकों पर, साइन बोर्ड पर भी लिखी होती हैं किन्तु वे लिखी है- "पर उपदेश कुशल बहु तेरे, जे आचरे ते नर न घनेरे।"

जो उसे आचरण में लाये ऐसे मनुष्य बहुत कम होते हैं तो महानुभाव आचार के बारे में कहा- आचाराः कुल माख्याति,देश माख्याति भाषितं

आचरण आपके कुल को कह देता है, आप किस कुल से हो यह कह देता है। सत्यभामा की शादी दासी पुत्र कपिल से हो गई,यद्यपि वह वेद पाठी था किंतु सत्यभामा ने जब उसकी चेष्टायें देखीं तो वह समझ गयी ये व्यक्ति कुलीन नहीं हो सकता, वे राजा के पास गयी पुनः न्याय हुआ पता चला कि वास्तव में यह दासी पुत्र है।

एक कौआ उड़कर जा रहा था, कोयल ने पूछा-मामा! कहाँ जा रहे हो? तुनक कर के बोला- बेटी यहाँ तो कोई मेरी आवाज को समझता ही

नहीं-

"जो जाको गुण जासहिं सो ते आदर दे,
कोयल अम्बुहि लेत है काक निबोरी लेत।"

मेरी आवाज को कोई जानता नहीं है जैसे कोयल आम को महत्व देती है और कौवा नीम की निबोरी को, तो कौआ कहने लगा यहाँ मेरी आवाज को सुनन समझने वाला कोई नहीं है इसलिए मैं वहाँ जा रहा हूँ जहाँ मेरा सम्मान होगा, मेरी आवाज को सुनने के लिए लोग तरसेंगे, जैसे तेरी आवाज को तरसते हैं। कोयल कहने लगी- मामा- वहाँ भी तुम्हें लोग पत्थर ही मारेंगे, अरे! पत्थर कैसे मारेंगे, मैंने किसी से कुछ लिया है क्या? मामा- कुछ लिया तो नहीं है किन्तु बात यही है।

कौआ का-का धन हरे कोयल-काको देय।
मीठी वाणी बोलकर जग अपनो कर लेय।

तुम्हारी जो कर्कश वाणी है वह तुम्हें पत्थर खाने के लिए मजबूर करती है और मेरी मीठी वाणी सुनकर लोग मुझे मीठे फल खिलाना चाहते हैं, इसलिए मेरा तुमसे यही कहना है कि स्थान को बदला मत करो यदि बदलना ही है तो अपनी वाणी को बदला करो। महानुभाव!

जो व्यक्ति अपने व्यवहार को बदलने में असमर्थ हैं अपनी वाणी, अपने क्रिया कलापों को बदलने में असमर्थ हैं, वे केवल दूसरों की निंदा कर सकते हैं इससे ज्यादा कुछ नहीं कर सकते। जो अपने आप को सुधारने में समर्थ हैं, उन्हें कभी दूसरों की निंदा करने की आवश्यकता नहीं पड़ी। जो अपने आप को सुधारने में असमर्थ हैं उन्हें ही प्रायः दूसरों से शिकायत होती है, जो अपने आपको सम्भालने में सुधारने में समर्थ हैं उन्हें कभी भी किसी से शिकायत नहीं होती है। शिकायत अपने आप में कमजोरी का प्रतीक है। जो व्यक्ति अपने आप में सम्पूर्ण है पूर्ण है, उसे शिकायत क्या? किन्तु जिसकी खुशी, जिसकी शांति, जिसका सुख, जिसका वैभव किसी दूसरे पर निर्भर होगा तब उसके हिलने-डुलने से उसमें भी अंतर तो आयेगा ही। जिस मकान की नींव मजबूत है गहरी है उसे क्या फर्क पड़ता है, किन्तु जिसका मकान

किसी प्लाई पर बना है या कपड़े पर तानकर बना है यदि नीचे से प्लाई या कपड़े से बना डंडा हिलता है तो पूरा मकान झूल जाता है, इसलिए यदि तुम किसी के आधार पर हो तो उसके थोड़े से हिलने पर तुम डगमगा जाओगे। गिरने के Chance रहेंगे और यदि तुम स्वयं के आधार पर हो तो संसार का कोई भी प्राणी कोई भी शक्ति तुम्हें न तो किंचित् हिला सकते हैं और न डिगा सकते हैं तो महानुभाव! आचार के बारे में आचार्यों ने लिखा हैः-

"आचारः परमो धर्मः, आचारः परमो तपः।
आचारः परमं ज्ञानंःआचारः परमो सुखः।।"

आचार ही परम धर्म है, आचार से बड़ा कोई धर्म नहीं और जिसके जीवन में आचार नहीं उसके जीवन में कोई धर्म नहीं, आचरण अच्छा है और सच्चा है तो और दूसरे धर्म की आवश्यकता नहीं और आचरण में ही सच्चापन नहीं है तो संसार के और कितने ही धर्म ओढ़ लेना उनसे कोई कल्याण होने वाला नहीं है। "आचारः परमो तपः" संसार में यदि सबसे बड़ा कोई तप है तो आचरण की शुद्धि है, यदि आचरण की शुद्धि नहीं है तो कितने ही व्रत उपवास कर लो, कितना ही त्याग कर लो, कितना पंचाग्नि तप कर लो, यदि आचरण शुद्ध नहीं है तो चाहे सिर के बल खड़े हो जाओ, चाहे नदी में खड़े हो जाओ, चाहे कुछ भी करो, आचरण की शुद्धि के बिना आत्मा की शुद्धि सम्भव नहीं।

"आचारः परमं ज्ञानं" आचार से बढ़कर संसार में कोई दूसरा बड़ा ज्ञान नहीं हो सकता, जिसका आचरण शुद्ध है उसको समझो किसी की आवश्यकता नहीं है। समझाने की आवश्यकता तो उन्हें पड़ती है जो आचरण विहीन हैं, केवल शब्दों का संग्रह करके अपने मस्तिष्क में रखकर घूमते-फिरते हैं, दूसरों को सिखाने बताने के लिए। आचारात् किम् न साधयेत् संसार में ऐसा कौन-सा पदार्थ है जो आचरण से सिद्ध न हो सके, आचरण

से प्राप्त न हो सके। तुम उस वस्तु के काबिल बनो वह वस्तु तुम्हें अवश्य प्राप्त होगी, व्यक्ति भगवान से मांगता है, वही मांगता है जो उस वस्तु के काबिल नहीं है। यदि तुम काबिल बन जाओगे तो प्रकृति वह तुम्हें अवश्य नियम से देगी, विश्वास रखो, यदि तुम काबिल नहीं हो और वस्तु तुमने कैसे भी प्राप्त कर ली तो तुम उसे रख नहीं पाओगे, सदुपयोग नहीं कर पाओगे, पचा नहीं पाओगे, तो महानुभाव! स्वयं काबिल बनना है। आचार के बारे में और भी लिखा हैः-

"सदाचारो महत्धर्मः मूल ज्ञान तपोनिधि।
पष्पाणि तस्य वैराग्यं संयमो हि गुणाकरो।।

सदाचार महान धर्म है, और सदाचार ही मूल है जड़ है त्याग और तपस्या का। आत्म ध्यान और तपस्या का यदि मूल कुछ है तो वह है सदाचार। सदाचार के पेड़ पर ही वैराग्य के पुष्प होते हैं वह सदाचार उसका फल है और सदाचार ही संयम और गुणों का आकर है। आकर अर्थात् खजाना है। सदाचार एक ऐसी चुम्बक है उसमें इतना गुरुत्वाकर्षण है कि उसमें समस्त गुण खिंचकर के चले आते हैं जैसे गंध के लोभी भ्रमर पुष्प के पास चले आते हैं जैसे प्रकाश के तीव्र इच्छुक पतंगे दीपक के पास आ जाते हैं। महानुभाव सदाचार की शक्ति भी ऐसी ही है। सदाचार के बारे में आगे और भी कहा है-

सदाचारो बन्धुः गुणगण निधि मातु सम वा,
सदाचारो धर्मो विगत इव दोषो त्मुत गतिः।
सदाचारो लोके जनयति शशि सन्निभयसम्
सदाचारो वन्दे भव विभव हान्ये सुमनसाम्।।

मैं उस सदाचार की वन्दना करता हूँ जो सदाचार संसार के प्राणियों के संसार को नाश करने में समर्थ है अच्छे मन वाले व्यक्ति जिस सदाचार का आश्रय लेकर संसार से पार हो जाते हैं, सदाचार रूपी नौका संसार रूपी समुद्र से

पार लगा देती है, सदाचार की रस्सी संसार कूप में पड़े व्यक्ति के लिए आलम्बन है, सदाचार रूपी जहाज संसार समुद्र से पार लगाने वाला होता है। तो वह सदाचार कैसा है- 'सदाचारो बन्धु' संसार का कोई भी मित्र तुम्हें धोखा दे सकता है तुम से धन छीन सकता है, किन्तु सदाचार तुम्हें कभी धोखा नहीं दे सकता, तुम्हें कभी ठगेगा नहीं, कैसा है वह 'गुणगणनिधि मातु सम वा' गुणों के समूह की निधि, माँ के समान रक्षा करने वाला है वह सदाचार, जैसे माँ अपने छोटे बच्चे की सुरक्षा करती है ऐसे ही सदाचार भी उस मानव की रक्षा करता है जो मानव अपने जीवन में इस सदाचार को माँ की तरह सम्मान देता है।सदाचारो धर्मः, सदाचार धर्म है कैसा है, विगत इव दोषोत्श्रुतगति" समस्त दोषों से रहित वह सदाचार ही धर्म है।सदाचार चन्द्रमा के समान संसार में शीतल यश और कांति फैलाने वाला है। इसीलिए मैं सदाचार की वन्दना करता हूँ, वह सदाचार मेरे संसार का अंत करने में समर्थ हो।

महानुभाव! सदाचार के बारे में कोई कवि लिखता हैः-

अरब-खरब की सम्पदा उदय अस्तलों राज।
सदाचार बिन जानिये पत्थर भरे जहाज।।

सदाचार के बिना तुम्हारे पास कितना ही भौतिक धन हो वह तो जहाज में भरे पत्थर के समान बेकार है और सदाचार है तो व्यक्ति गरीब होते हुए भी अमीर है, उससे बढ़कर कोई धन नहीं है।

सदाचार गुण सिंधु है सदाचार ही मोक्ष की ध्वजा है, सदाचार अनंत सुख का देने वाला है। सदाचार ही जिनत्व का कारण है। महानुभाव!

सदाचार क्या है?

अपनी अच्छाईयों को प्रतिकूलता में नहीं छोड़ना।

महाराणा प्रताप अपने राज्य को छोड़कर जंगल में भी रहे, घास की रोटियाँ खाना तो पसन्द कर लिया किन्तु माँस की बोटियाँ खाना स्वीकार नहीं किया। सदाचार के मायने क्या हैं-

सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र उन्होंने अपने सत्य को सदाचार को नहीं

छोड़ा चाहे मरघट पर जाकर रखवाली की, राम ने अपने पिता की आज्ञा पालन करने के लिए राज्य का परित्याग कर दिया, जंगल में वन-वन घूमे। पाण्डव जब जुआ हार गये तो वन-वन तो रहे किन्तु अन्याय, अत्याचार को स्वीकार नहीं किया।

सदाचार क्या है- यही है कि अपने धर्म को, संकल्पों को, नियमों को नहीं तोड़ना, जीवन में प्रतिकूलतायें भी आती हैं किन्तु हमें अपने धर्म को छोड़ना नहीं है।

आपने मध्य प्रदेश में पन्ना जिले का नाम सुना होगा जहाँ हीरा निकलता है, वहाँ का राजा पहले अमानसिंह था, उसका बेटा था छत्रसाल जिसने कुण्डलपुर के बड़े बाबा की प्रतिमा का जीर्णोद्धार कराया। वह छत्रसाल बचपन से ही बड़ा गम्भीर, सदाचारी स्वाभिमानी रहा, क्योंकि एक दिन छत्रसाल जब छोटा सा था पालने में झूल रहा था तब अमान सिंह अपनी रानी से कुछ मजाक कर रहा था, उसकी रानी ने उससे कहा- देखो! पर पुरुष के सामने तुम मेरी बेइज्जती मत करो, अमान सिंह ने पूछा इन महलों में हमारे-तुम्हारे सिवाय अन्य परपुरुष कौन है, रानी ने कहा मेरा बेटा जो अभी पालने में झूल रहा है और रानी ने जब इशारा किया बेटे ने आँख बंद कर लीं और करवट ले ली। देखो शर्म से वह पलट गया, वह मेरा बेटा है, संस्कार ऐसे हैं वह समझता है, जानता है, तुमने मजाक की मेरे बेटे के सामने समझो परपुरुष के सामने। वही छत्रसाल जब बड़ा हुआ तब बहुत कर्तव्यनिष्ठ था। लोग उससे ईर्ष्या करते वह बहुत सुन्दर था, स्त्रियाँ उससे ईर्ष्या करती थीं और चाहती थीं किन्तु कोई उसे डिगा नहीं पायी।

एक दिन एक वेश्या ने संकल्प किया कि मैं उसे डिगा कर ही रहूँगी, तो छत्रसाल जिस रास्ते से जाता था, वह वेश्या उस रास्ते पर जाकर बैठ गई, पेड़ की आड़ में छिपकर रोने की आवाज सुनाई दी, उसने सोचा मेरे राज्य में कौन रो रहा है? वह घोड़े से उतरा और उस महिला के पास पहुँचा, उसका मुँह ढका हुआ था, पहचान तो नहीं पाया, उसने पूछा- कौन हो आप? क्यों

रोती हो, क्या बात है? उसने कहा- हमारा राजा हमारा दुःख सुनता ही नहीं है, उसे लगा यह तो मुझ पर तीर कस रही है, बोले हाँ कहिए, आप राजा से क्या चाहती हो। क्या राजा आपके दुःख को मिटा सकता है, बोली हाँ मिटा सकता है सौ बार मिटा सकता है, किन्तु राजा मेरी फरियाद सुनता नहीं, वह बोला हम तुम्हें वचन देते हैं यदि हम तुम्हारे दुःख को मिटाने में समर्थ हों तो अवश्य मिटायेंगे। वह मुस्कराती हुई कहने लगी मुझे तुम्हारे जैसा बेटा चाहिए। छत्रसाल उसकी बात सुनकर स्तब्ध सा रह गया परन्तु वह भी तेज दिमाग का था तुरन्त उसके पैर पकड़ लिए और कहने लगा- हे माँ मुझे अपना दूध पिला दे, वेश्या का आशय तो गंदा था किंतु छत्रसाल ने क्या कहा माँ मैं ही तेरा बेटा हूँ मुझे तू दूध पिला दे वह वेश्या पानी-पानी हो गई। महानुभाव!

कहने का आशय ये है कि व्यक्ति अपने धर्म की रक्षा कैसे-कैसे करता है, किसके जीवन में प्रतिकूलता नहीं आती सबके जीवन में आती है। चाहे कोई व्यक्ति छोटा हो या बड़ा परीक्षा सबके जीवन में आती है,

बेबस मजबूरी लाचारी किसके साथ नहीं होती।
बोलो ऐसी धरा कहाँ है जहाँ पर रात नहीं होती।

तो महानुभाव! जीवन में मजबूरियाँ भी आती हैं, लाचारी भी आती हैं, कभी व्यक्ति बेबस भी हो जाता है, किन्तु सदाचारी व्यक्ति वह है कितनी भी प्रतिकूलतायें आयें।

"तो भी न्याय मार्ग से मेरा कभी न पग डिगने पाये।"

वही सदाचार कहलाता है, उस सदाचार को आप भी अपने जीवन में स्थान दें, वह सदाचार आपके जीवन को महान बनाये, आपको भगवान बनाये, आपको सिद्धि दिलाये, वह सदाचार संसार का सारभूत रत्न है और उसके हमने चार हिस्से कर दिये। कोई वस्तु रखी हो उसको चारों दिशा से देखो, एक दिशा से देखते हैं तो दिखाई देता है सद्कार्य, दूसरी ओर से देखा सद्व्यवहार, तीसरी ओर से देखा सद्विचार और चौथी तरफ से देखा तो सद्

आहार। यही सब मिलकर कहलाता है- सदाचार! सदाचार! सदाचार! आपके जीवन में भी हो सदाचार और आपके जीवन में हो यह सद्आचार! निः संदेह आप कर सकेंगे आत्म विहार। अधिक न कहते हुए आप सभी को सदाचार की प्रेरणा देता हुआ अपनी वाणी को विराम देता हूँ।

"शांतिनाथ भगवान की जय"

भरोसा "खुदा" पर है,
तो जो लिखा है तकदीर में,
वो ही पाओगे।
मगर,
भरोसा अगर "खुद" पर है,
तो खुदा वही लिखेगा,
जो आाप चाहोगे।

अमावस्या की रात्रि में प्रज्वलित दीप

धर्मस्नेही, सत्श्रद्धालु, यहाँ पर उपस्थित आप सभी पुण्यात्मा, आसन्न भव्य, महानुभाव!

अनादिकाल से हम और आप शाश्वत निशा के तमाछिन्न वातावरण में ही रहे, ये एक ऐसी तमसा है, ऐसी निशा है, ऐसी रजनी है जिसमें सुधांशु का पता नहीं, सुधाकर का पता नहीं, शीतांशु का पता नहीं कहाँ है। हर एक महिने में १५ दिन कृष्ण पक्ष के होते हैं और १५ दिन शुक्ल पक्ष के होते हैं पर हमारी निशा तो ऐसी है जिसमें शुक्ल पक्ष का तो कहीं नामोनिशान ही नहीं है। ऐसा लग रहा है जीवन में जैसे शाश्वत कृष्ण पक्ष ही चल रहा हो। जैसे कोयले में सफेदी खोजना असंभव होता है, वैसे लगता है हमारे जीवन में भी वह कोयले की तरह से चला आ रहा है, सफेदी आज तक खोज नहीं सके। सफेदी कोयले में दबी होती है। आपने देखी, किसी ने देखी? क्या धोने पर मिल जाएगी?नहीं कोयले में सफेदी होती है किन्तु जलाने पर ही प्राप्त होती है, बिना जलाए नहीं। यदि कोयले में सफेदी नहीं होती तो जलाने पर कहाँ से आती? इसी तरह हमारी आत्मा में शुक्ल पक्ष तो है किन्तु शुक्ल पक्ष तभी सम्भव है जब कृष्ण पक्ष का अंधकार जला दिया जाए। ये बाहर की अग्नि

होती है जो कोयले को जलाती है। कोयला जल करके राख हो जाता है किन्तु धवल हो जाता है। ऐसे ही हमारा जीवन सांसारिक जीवन है, तम है जब तक ये जलेगा नहीं तब तक धवलता नहीं आएगी। हम चाहते ये हैं कि संसार छोड़ना ना पड़े और मोक्ष पकड़ में आ जाए। हम चाहते हैं कि दोनो होंठ कसके बंद कर के बैठ जाऐं और अट्टाहास का, हँसी का आनंद भी आ जाए। हम चाहते हैं हम यहाँ से ना हिलें और दौड़ने का आनन्द ले लें। हम चाहते हैं शरीर पर पानी की एक बूंद भी ना लगे और समुद्र में तैरने का आनन्द भी ले लें। हम चाहते हैं कि कमरे से बाहर ना निकलें, अपने स्थान से खड़े ना हों और दरवाजा अपने आप खुल जाए। दरवाजा जब अंदर से तुमने बंद किया है तो कौन आकर के खोलेगा। बाहर से कहीं दरवाजा बंद होता तो अब तक कब का खुल गया होता। इतने तीर्थंकर हुए इतनी अनंतानंत चौबीसी हो गयी, कोई भी तीर्थंकर अपनी दिव्यध्वनि से, दिव्यवाणी से तुम्हारी अंतरात्मा के दरवाजे को खोल देता किन्तु मुश्किल तो ये पड़ी है कि दरवाजा तुमने अन्दर से बंद कर लिया है। कोई महात्मा बाहर आकर के दस्तक दे करके चला जाएगा, तुम्हारे कमरे में प्रवेश नहीं कर पाएगा। कोई मसीहा, कोई फरिश्ता, कोई देवदूत, कोई तीर्थंकर, कोई महापुरुष, कोई भी संत, ऋषि, महात्मा मुनि आएगा किन्तु बाहर से लौटकर चला जाएगा। तुम्हारे घर में प्रवेश नहीं कर सकता। (Without Permission no Admission) Permission देनी चाहिए और तुम अन्दर कुंडी लगाके बैठे हो। कोई आएगा चाहे भिखारी आए, चाहे कोई संत- महात्मा आए द्वार तक तो आ सकता है किन्तु तुम्हारे घर तक नहीं आ सकता। दर तक तो कोई भी आ सकता है घर तक हर कोई नहीं आ सकता। घर में वही आता है जिसे बुलाया जाता है। दर पर बिना बुलाया भी आ जाता है। महानुभाव! कई बार हम सोचते हैं अनादिकाल से ले करके आज तक इतना समय निकल गया अरे! कभी तो हमारी नींद खुल जाती, कभी तो हमारा कल्याण हो जाता। ये बातें

कहीं काल्पनिक तो नहीं हैं कि अनादि काल से जीव निगोद में भटक रहा है, अनादिकाल से संसार में परिभ्रमण कर रहा है, जन्मता है, मरता है, इसका मोक्ष नहीं हुआ, अनंत चौबीसी हो गई, हमारा मोक्ष नहीं हुआ, क्या हुआ? नहीं, ये काल्पनिक नहीं है, ये शत प्रतिशत/ सत्य है। कहीं भी इसमें शक का तो कोई स्थान है ही नहीं, कारण एक छोटे से उदाहरण से मैं बताता हूँ एक चींटी साइकिल के पहिये पर चक्कर लगा रही है। उसकी परिधि पर चक्कर लगा रही है मैं आपसे पूछता हूँ वह केन्द्र पर पहुँचेगी, उसे कितना समय लगेगा? कब तक पहुँचेगी? कभी नहीं पहुँचेगी, क्यों? क्योंकि उसकी दिशा ही गलत है यही तो हमने किया है, अनादिकाल से परिधि पर चक्कर लगा रहे हैं, बाहर ही बाहर घूमते रहे। अन्दर तक जाने का, केन्द्र तक जाने का प्रयास तो अब तक हमने किया ही नहीं और एक साथ दो काम हो नहीं सकते। परिधि पर भी घूमते रहें और अन्दर की ओर भी यात्रा हो जाए। दो में से एक ही हो सकता है। एक राही एक समय में एक रास्ता चल सकता है दो नहीं। चाहे भले ही वे दो रास्ते समानान्तर ही क्यों न हों तब भी दो, पर वो नहीं चल सकता और फिर तुम तो विपरीत रास्ते की बात कर रहे हो।

दो मुख सुईं सिले न कन्था
दो मुख राही चले ना पंथा
दोइ कार्य न होए सयाने
विषय भोग और मोक्ष हु जाने

कोई भी स्त्री सिलाई करती है तो एक तरफ से करती है दो तरफ से नहीं, कोई कितना भी अच्छा राहगीर हो, कितनी भी तेज गति से चलने वाला हो पर एक बार में तो एक ही दिशा में चल सकता है। हमने क्या किया? हम जिस राह पर चल रहे थे उस राह को छोड़ा नहीं, जिस राह पर जाना था उसे पकड़ा नहीं, क्योंकि हम पकड़ना चाहते थे तो छोड़ना नहीं चाहते थे, जब छोड़ना चाहते थे तब पकड़ने का भाव नहीं था। महानुभाव! इसलिए इस घोर

अंधकार में अनादि और अभव्य की अपेक्षा से अंतहीन रात्रि से पार न हो सके और भव्य की अपेक्षा से कहेंगे तो अनादि सान्त, ऐसी ये तमसावृत निशा आज तक हमारे जीवन में है। दूसरी बात एक और है निशा भी खतरनाक नहीं होती यदि अपने पास कुछ संकेत हों तो। कई बार अंधे व्यक्तियों को देखा है घर से दुकान, दुकान से घर आ जाते हैं कहीं टकराते नहीं। कई बार अंधे व्यक्ति को देखा है लाठी के सहारे-सहारे पूरी यात्रा कर लेते हैं। अंधा व्यक्ति कहो या अंधकार कहो उसके लिए तो दोनों बात एक ही हैं। अंधकार किसे कहते हैं? अंधंकरोति अंधकारः जो आँखों वाले व्यक्ति को भी अंधा कर दे उसे अंधकार कहते हैं कुंभंकरोति कुंभकारः जो घड़े को बनाने वाला होता है उसे कुंभकार कहते हैं। ऐसे ही जो अंधा करने वाला होता है वह अंधकार होता है जो आँखों वाले व्यक्ति को भी अंधा कर दे, तो वह अंधा व्यक्ति जिसकी अभी हम चर्चा कर रहे थे उसे कुछ आभास है कि पहले ऐसे जाना है फिर मुड़ना है हाथ में कुछ भी नहीं तो कम से कम लाठी तो है। लाठी से देख लेता है कहीं पेड़ तो नहीं है, दीवार तो नहीं है फिर आगे बढ़ जाता है। किन्तु हम तो अनादिकाल से ऐसे व्यक्ति रहे कि जिसके हाथ में लाठी भी नहीं है, मुश्किल तो ये है कहाँ चलें?यह तो नेत्रों की ज्योति न होने से अंधा है परंतु नीतिकारों ने आचार्यों ने बताया कि अंधा कौन है?

अन्धास्त एवं लोकेऽस्मिन् विश्वतत्त्वप्रकाशकम् ।
ज्ञान नेत्रं न यैः प्राप्तं गुरोरन्ते शिवप्रदम् ।।

जिन्होंने गुरु के समीप समस्त तत्त्वों को प्रकाशित करने वाला, कल्याणदायक ज्ञानरूपी नेत्र नहीं प्राप्त किया है, वे ही मनुष्य अंध हैं" उस अंधपुरुष के हाथ में लाठी तो थी। अंधा व्यक्ति लाठी के सहारे आगे बढ़ सकता है। अंधकार में व्यक्ति लाठी से जा सकता है, कुछ तो धीरे-धीरे बढ़ेगा, टकरायेगा नहीं, किन्तु अंधकार घनघोर है लाठी भी नहीं है, फिर क्या करना चाहिए? दीपक ले लें, दीपक होता फिर तो अंधकार ही नहीं होता, जहाँ प्रज्वलित दीपक है वहाँ तो अंधकार ही नहीं है।चेतना के अंधकार को दूर करने वाला प्रज्वलित दीप

है-तत्त्वज्ञान

अंधकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं।
सूना है वह देश जहाँ सद् साहित्य नहीं।।

वह आत्मा का प्रदेश सूना पड़ा हुआ है, जहाँ सम्यक् शास्त्रों का अभाव है, सद्ज्ञान का, तत्त्वज्ञान का अभाव है

तदस्य कर्तुं जगदङ्घ्रिलीनं,तिरोहितास्ते सहजैव शक्तिः
प्रबोधितस्तां समभिव्यनक्ति,प्रसह्य विज्ञानमयःप्रदीपः

इस जगत् को अपने चरणों में लीन करने के लिए जो सहज स्वाभाविक आत्म शक्ति है वह तिरोहित हो रही है,अच्छी तरह प्रज्वलित हुआ ज्ञान रूप दीपक सहज शक्ति को प्रकट कर देता है।आत्मा के अंधकार को दूर करने के लिए सूर्य, चन्द्रमा की आवश्यकता नहीं, उस अंधकार को करोड़ों सूर्य चन्द्रमा मिल करके नष्ट नहीं कर सकते, जो अंधकार हमारी आत्मा के प्रदेशों में छिप करके बैठा है। उस अंधकार को तो गुरु के ही वचन दूर कर सकते हैं, जिनवाणी के वचन दूर कर सकते हैं।आचार्य महाराज कहते हैं -

आलोकेन विना लोको मार्गं नालोकते यथा ।
विनागमेन धर्मार्थी धर्माध्वानं जनस्तथा ।।

"जिस प्रकार प्रकाश के बिना लोक, मार्ग को नहीं देखता है उसी प्रकार धर्म का इच्छुक मनुष्य आगमज्ञान के बिना धर्म मार्ग को नहीं जानता ।" महानुभाव! अंधा व्यक्ति यदि दीपक ले करके चले तो संभावना है वह सही राह पर पहुँच जायेगा। आप कहेंगे महाराज जी! कैसी बात कर रहे हैं, अंधा व्यक्ति दीपक, टॉर्च, लालटेन कुछ भी लेकर चले क्या फर्क पड़ता है, हाँ! ठीक कहते हो फिर भी यदि अंधा व्यक्ति टॉर्च ले करके चलेगा तो खतरा कुछ कम है। मतलब? एक बार क्या हुआ एक अंधा व्यक्ति जंगल में एक झोंपड़ी में रहता था उसे पानी लेने के लिए बहुत दूर जाना पड़ता था, नदी किनारे रात्रि में जाता था, एक हाथ में लाठी एक हाथ में मटका, एक बार मार्ग में जाते समय किसी व्यक्ति से टकरा गया अंधे व्यक्ति ने हाथ जोड़े

भैया क्षमा करना मैं अंधा हूँ। अंधे ने कहा नहीं, पर कहना चाहता था, मैं तो अंधा था क्या तू भी अंधा था, किन्तु वह चुप रहा माफी मांग ली, उस आँख वाले व्यक्ति ने कहा- अंधा है तो क्या हुआ हाथ में टॉर्च लेकर तो आता, अंधे ने कहा- यदि मैं हाथों में टार्च लेकर भी आ जाता तो क्या होता, सामने वाले ने कहा यदि टॉर्च तेरे हाथ में होती तो मैं देख लेता कि सामने से कोई आ रहा है। अपने लिए नहीं दूसरों के लिए जिससे कोई तुझसे आकर न टकरा पाये अंधे की समझ में बात तो आयी कि यदि मैं टॉर्च लेकर चलूँगा तो कोई मुझसे न टकरायेगा।

महानुभाव! किन्तु अंधेरा तो अपने आप में अंधेरा ही है, अंधेरे में व्यक्ति निःसंदेह रास्ता भटक सकता है, अंधेरे में मंजिल किसी ने भी प्राप्त नहीं की और कई बार तो ऐसा होता है मंजिल अपने पीठ के पीछे भी हो, तो भी अंधेरे में चक्कर काटते रहेंगे, मंजिल तक न पहुँच पायेंगे। प्रकाश हो तो सुदूरवर्ती वस्तु को भी सहजता में प्राप्त किया जा सकता है।इसी प्रकार आत्मा में यदि सम्यक् ज्ञान का प्रकाश है तो मोक्ष रूपी मंजिल को भी प्राप्त किया जा सकता है। आचार्यों ने अज्ञानी व्यक्ति को भी अंधा कहा है

अनेक संशयोच्छेदि परोक्षार्थस्य दर्शकम् ।
सर्वस्य लोचनं शास्त्रं यस्य नास्त्यंध एव सः ।।

"अनेक संशयों को नष्ट करने वाला परोक्ष अर्थ को देखने वाला तथा सबके नेत्र स्वरूप शास्त्र जिसके नहीं है, वह अंधा ही है। महानुभाव ! यह अनादिकालीन अंधेरा, कैसा अंधेरा अमावस्या का अंधेरा। अंधेरा तो अन्य रात्रि में भी होता है किन्तु कहा जाता है कि अमावस्या की रात्रि कुछ ज्यादा गहरी होती है और जब आकाश में गहन बादल छाये हों तब तो उस अंधेरे का कहना ही क्या? किन्तु अंधेरा कितना ही पुराना हो, कितना भी घना हो, कितना ही बड़ा हो, चाहे छोटा हो, उस अंधेरे को दूर करने के लिए एक साधन था, है, रहेगा, वह है छोटा सा दीपक, एक छोटा सा दीपक भी अंधकार से लड़ने का साहस रखता है। जिसके जीवन में छोटा सा दीपक हो

वह अंधेरे में भी अपनी पूरी यात्रा कर सकता है। आप कहेंगे ऐसा कैसे कर सकता है।

एक बार दो मित्र शिखर जी यात्रा करने के लिए गये, उस समय शिखर जी की यात्रा करना बड़ा कठिन माना जाता था, ऊबड़-खाबड़ रास्ता था तो लोग-बाग १२-१ बजे यात्रा करने के लिए निकल जाते थे और दिन में धूप हो उससे पहले यात्रा करके लौटकर भी आ जाते थे, एक मित्र अपनी टॉर्च लेकर यात्रा करने के लिए चल दिया, दूसरा मित्र डर गया मैं कैसे जाऊँ और पहाड़ के समीप बैठकर रोने लगा, हाय रे! मैं इतनी दूर से चलकर आया, यहाँ पर क्या करूँ? वह प्रकाश होने का इंतजार करने लगा इंतजारी की, धूप आ गई, थोड़ा चला पसीना आ गया। अब यात्रा नहीं हो सकती सोचकर लौट आया, एक दिन हुआ , दो दिन हुए, तीन दिन हुए, एक किसान प्रतिदिन उस व्यक्ति को देखता था कि यह व्यक्ति प्रतिदिन आता है चलता है लौट आता है थका है, हारा हताश है, उदास है, निराश है इसके मन की क्या बात है पूछ के तो देखते है? पूछा क्या बात है बोला- मैं शिखर जी की यात्रा बड़ी भावना से करने आया था, इतने बड़े अंधकार को देखकर घबरा जाता हूँ। प्रकाश मेरे पास है नहीं छोटा सा टॉर्च का पाँच फीट तक का प्रकाश है दिन में सोचता हूँ यात्रा करने की, तो गर्मी बहुत हो जाती है, उस किसान ने कहा कि तेरे पास प्रकाश है- हाँ, कितना बड़ा ५ फीट का, इस ५ फीट के प्रकाश में २७ किमी. की यात्रा कैसे की जाये किसान ने कहा यात्रा तो हो सकती है किन्तु करना चाहो तो। अरे भैया इसलिए ही आया हूँ करना चाहता हूँ, ठीक है तो चलो, देखो तो जीवन में सम्पूर्ण सफलता, सम्पूर्ण उपलब्धियाँ एक साथ नहीं मिलती, हर मंजिल एक से चालू होती है।

Journey Of Hundered Miles Start With One Step

पहली सीढ़ी पर पैर रखो तो अंतिम सीढ़ी पर भी पैर रखोगे। तुम्हारे पास ५ फीट का प्रकाश है तो पहले ५ फीट चलो अब ५फीट ही और चलो, तो इस

प्रकार वह आगे बढ़ता गया, प्रकाश भी आगे बढ़ता गया और क्रम-क्रम से पूरी शिखर जी की यात्रा करके नीचे आ गया। एक दीया पर्याप्त है तुम्हारी पूरी जीवन यात्रा कराने के लिए, एक सूर्य का प्रकाश भी अपर्याप्त है उन आलसी व्यक्तियों के लिए जो यात्रा करने का बहाना तो करते हैं किन्तु यात्रा नहीं करते, हमारा जीवन कितना ही अंधकारमय है, चाहे अक्षर के अनंतवे भाग ज्ञान हमारे पास नहीं है, कोई बात नहीं किन्तु धीमे-धीमे बढ़ते-बढ़ते हम भी सर्वज्ञ बन सकते हैं पूरा ज्ञान, केवलज्ञान भी हमें प्राप्त हो सकता है किन्तु तब, जब हम आगे बढ़ते जायेंगे, एक-एक पग चलने वाली चींटी सैकड़ों योजन की दूरी पार कर लेती है, न उड़ने वाला पक्षी एक कदम भी नहीं चल पाता।

महानुभाव! प्रकाश हम क्यों चाहते हैं, हर अंधकार का अंत प्रकाश है और हर प्रकाश का अंत अंधकार है। हर जीवन का अंत मृत्यु है हर मृत्यु का अंत पुनर्जीवन है, किन्तु मृत्यु की मृत्यु, जीवन की मृत्यु दोनों एक साथ होते हैं वह निर्वाण है, महाप्रयाण है (महानुभाव!) दीपक प्रकाश का प्रतीक है और ज्ञान भी प्रकाश का प्रतीक है,इसे तीसरे नेत्र की उपमा दी गई है -

ज्ञानं तृतीयं पुरुषस्य नेत्रं, समस्त तत्त्वार्थ विलोकदक्षम् ।
तेजोऽनपेक्षं विगतान्तरायं, प्रवृत्तिमत् सर्व जगत् त्रयेऽपि ।।

"पुरुष का तीसरा नेत्र ज्ञान है जो समस्त तत्त्वार्थों को देखने में समर्थ है, प्रकाश आदि अन्य पदार्थों की अपेक्षा से रहित अन्तराय विघ्न बाधाओं से रहित है और तीनों लोकों में भी प्रवृत्त है।" सम्यक् ज्ञान के नन्दा दीप से चेतना को प्रकाशित करना है। ज्ञान हमारी आत्मा का स्वभाव है यद्यपि लोगों को प्रकाश पसन्द है जो लोग भले आदमी हैं भला आदमी सोएगा भी तो रात में लाइट जलाकर सोएगा, अंधकार में सो ही नहीं सकता, दूसरी बात यह है जब तक प्रकाश रहता है तब तक कुकृत्य खोटे कार्य नहीं किये जा सकते, प्रायःकर वे अंधकार में किये जाते हैं जो पापी व्यक्ति होते हैं उन्हें अंधकार पसन्द होता है, आवरण पसन्द होता है। पुण्यात्मा व्यक्ति जो होता है वह

प्रकाश चाहता है, एकान्त स्थान चाहता है, पापी व्यक्ति जब एकान्त में बैठा होता है तो उसे अपने पाप दिखाई देने लगते हैं इसलिए टी.वी. खोल देता है न्यूज पेपर पढ़ने लगता है, कुछ और करने लगता है, पापी घर में भी एकांत में न बैठ पायेगा और पुण्यात्मा व्यक्ति एकांत में घंटो-घंटों निकाल देगा, उसको उसी में आनंद आता है तो अंधकार उसे पसन्द है जो दीर्घ संसारी जीव होते हैं। अंधकार में रहते हैं नारकी जीव, नरकों में प्रकाश है क्या? और प्रकाश में रहते हैं स्वर्ग के देव, विमान में रहने वाले। वहाँ अंधकार नहीं है। प्रकाश में जघन्यतम अपराध नहीं किये जा सकते हैं। अंधेरा पाप कार्य की प्रेरणा देने वाला होता है और प्रकाश अच्छे कार्य की प्रेरणा देता है। Practical करके देखना यदि आपके बैडरूम में अच्छा प्रकाश हो सामने अच्छी-अच्छी पुस्तकें रखी हों तो आपका मन करता है इन्हें पढ़ लें, और अंधेरा हो जाता है तो पाप की बात याद आती है। जीवन साथी की याद आती है। मन पाप के लिए भटकता है, इसलिए अंधकार संसार है और प्रकाश मोक्ष, क्या करना चाहिए? यदि कोई सूर्य न उगा सके इतना बड़ा अंतरिक्ष नहीं है कि सूर्य उगा सके, हमारी सामर्थ्य नहीं है कि चेतना के क्षितिज पर एक सूर्य केवल ज्ञान का प्रकट कर ले तो क्या करें एक छोटा दीया जला लें।

दीया धर्म ध्यान को वारो, नित-नित करे उजारो।

एक धर्मध्यान का दीपक अपने चित्त पर जला लो सम्यक् दर्शन का दीपक, सम्यक् ज्ञान का दीपक, सम्यक् चारित्र का दीपक चेतना के क्षितिज पर जैसे ही उदीयमान होता है तब निःसंदेह आत्मा का एक-एक प्रदेश प्रकाशित हो जाता है किन्तु उसके पहले एक दीया की आवश्यकता है। और दीया ऐसे जला न सकोगे चाहे अनंत काल बीत जाये, अंधेरे में कहाँ से लाओगे? अंधेरे में जब पहाड़ भी दिखाई नहीं दे रहा है तो और क्या दिखाई देगा तो फिर दीया जलाने की प्रेरणा भी दीये से मिलती है, बिना दीये के दीये की प्रेरणा नहीं मिलती। ध्यान रखना, एक जला हुआ दीया हजारों बुझे हुए दीयों को जला सकता है किन्तु हजारों बुझे दीये एक दीये को जला नहीं

सकते। प्रकाश निर्भीक होता है, सत्य निर्भीक होता है, धर्म निर्भीक होता है, ज्ञान निर्भीक होता है तीनों लोक मिलाकर भी उस सत्य ज्ञान को छीन नहीं सकते। और अंधकार को नष्ट करने के लिए एक किरण पर्याप्त है प्रकाश की, एक किरण पर्याप्त है सत्य की, एक पगडंडी पर्याप्त है संयम की, एक आस्था की डोर पर्याप्त है कोई कितने गहरे कुएँ में पड़ा हो आस्था की डोरी से चढ़कर ऊपर आ सकता है कितना भी बड़ा समुद्र हो छोटी सी नाव से पार हो सकता है। सबके चित्त में धर्म ध्यान का दीया होना चाहिए, किन्तु अभी आपने कहा दीये से दीया जलाया जाता है जो अनादि मिथ्या दृष्टि है उसके पास धर्म ध्यान कहाँ से आया वह दीया कैसे जलाये, हमारे जिन शासन में पाँच दीये हैं अब ये बात अलग है हमने कितने लिए हैं, लिए कि नहीं लिए हैं वे ५ दीपक हमें मिले हैं- अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु! ये ऐसे नंदादीप हैं, शाश्वत दीप हैं ये किसी प्रकार की हवा से, वर्षा से तूफान से बुझते नहीं हैं, अन्यथा अन्य दीपक तो हाथ लगाते-लगाते भी हल्की सी हवा से बुझ जाते हैं। किन्तु ये ऐसे निर्भीक दीपक हैं पहाड़ की चोटी पर जब मूसलाधार वर्षा भी हो रही हो साथ ही तूफान भी हो तब भी दीया जल रहा है।

आंधी और तूफानों में जो जलता हुआ मिल जाएगा
उस दीप से तुम पूछ लेना साधु का पता मिल जाएगा।

साधु की पहचान बस इतनी ही है आंधी और तूफानों में जिसकी चेतना न बुझे, जिसकी आत्म ज्योति मंद न पड़े, वास्तव में वही तो साधु है, वही तो परमेष्ठी है। महानुभाव! यदि ऐसा दीया एक बार कहीं मिल गया उस दीये के पास जाकर एक बार तो सिर झुकाओ, प्रणाम तो करो, बाल्टी कलश के नीचे जाकर नमस्कार करती है कलश उसे भर देता है। ऐसे ही अपने माथे को उस परमेष्ठी रूपी दीये की बाती से थोड़ा रगड़ो तो निःसंदेह तुम्हारा दीपक भी प्रज्वलित हो जाएगा। ज्ञान का प्रकाश जिन चरणों से आता है वहाँ जाकर

अपनी बाल्टी लगा लो। निःसन्देह उनकी पदरज क्या मिली ये समझिये सब कुछ आपको मिल गया, मोक्ष की जड़ मिल गई, क्योंकि संसार में सब कुछ है किन्तु अंधेरे मे ंरहने वाले को कुछ नहीं मिलता, जिसके हाथ में दीया है उसके हाथ में सब कुछ है। दीया हाथ में होता है तो घर में रखी वस्तु भी मौके पर मिल जाती है, दीया हाथ में होता है तो कमाया जा सकता है, लाया जा सकता है, बनाया जा सकता, यदि दीया नहीं है तो पीठ के पीछे रखी वस्तु भी आप खोज न पायेंगे।

"घर में धरा न पाइये जो कर दीया न होए"

यदि हाथ में दीपक नहीं हो तो घर में रखी वस्तु भी नहीं मिलती है। अमावस्या की रात्रि, अमावस्या मासांत, अमावस्या कितना प्यारा शब्द हैं ये, मासांत तिथि बहीखाता लिखने वाले अमावस्या को ३० लिखते हैं पूर्णमासी को १५, ये संकेत कर रही है कि अब तो जीवन का प्रारम्भ करो, अमावस्या मासांत तिथि है। अमावस्या में अंधेरा होता है, अंधेरा तो एकम्, दौज, तीज में भी होता है, केवल सिर्फ और सिर्फ पूर्णमासी को छोड़ सब जगह अंधेरा है २९ तिथि अंधेरे से युक्त होती है चाहे कम हो या ज्यादा हर तिथि में अंधेरा, शुक्ल पक्ष में अंधेरा घटता हुआ है और कृष्ण पक्ष उसमें उजाला घटता जा रहा है, अमावस्या के बाद माह का प्रारम्भ होता है दक्षिण भारत में ।हमारे यहाँ उत्तर भारत में पूर्णमासी के बाद प्रारम्भ मानते हैं किन्तु महीने का

महानुभाव! उस अमावस्या के अंधकार में एक दीपक जलाना चाहिए क्योंकि इससे बुरा, बड़ा, खतरनाक अंधेरा और कोई जीवन में हो नहीं सकता, उस अंधेरे में यदि दीया आपको मिल गया तो समझो आपको रास्ता मिल गया, वहाँ कैसे जाना है आप स्वयं ही तय कर लेंगे। एक बालक को आप पढ़ाने की केवल शिक्षा दे दीजिए, वह स्वयं देख लेगा कि पुस्तक में क्या है, एक-एक चीज समझाने की आवश्यकता नहीं है उसे तो बस पढ़ने की कला सिखानी है। ऐसे ही आपको हम संसार की एक-एक बात से परिचय

नहीं करायेंगे, केवल हम तो चाहते हैं कि आपके अंदर एक ज्ञान का दीया जल जाये और फिर नहीं कहना पड़ेगा आत्मा अलग है शरीर अलग है, नहीं कहना पड़ेगा यह त्याग करो वह त्याग करो। केवल एक भेद विज्ञान का दीया जल जाये आप स्वयं समझ जायेंगे, स्वपर का भेद आ जाएगा। यदि संसार की अनंत वस्तुओं को कहेंगे कि ये तुम नहीं थे, ये तुम नहीं हो तो अनंत काल भी बीत जायेगा पूरा समझ न पायेंगे तो महानुभाव!

ये पाँच दीपक हैं पंचपरमेष्ठी के वाचक, अपना दीया जलाओ खुद भी कोई एक परमेष्ठी हो जाओ, जैसे ही तुम्हारा दीया जलेगा तुम भी परमेष्ठी बन जाओगे, और यदि परमेष्ठी नहीं बने तो दीये के समीप में पहुँच जाओगे तो सच्चे श्रावक कहलाओगे, दीये के समीप में पहुँचकर के वह बुझा हुआ दीपक भी तो दिखाई देता है जो श्रावक परमेष्ठी के समीप में है भले ही अपना दीया नहीं जलाया, वह सच्चा श्रावक है जलाने की कगार पर है, स्पर्श कर रहा है जलने वाला है। जल गया तो परमेष्ठी बन गया और नहीं जला तो कम से कम श्रावक की श्रेणी में तो है। किन्तु जो जलते हुए दीये को पीठ देकर बैठ जाये उसको कौन समझाये, जो जलते हुए दीये के पास ही ना जाना चाहे उसे पकड़कर कौन लाये। तो पंचपरमेष्ठी शाश्वत प्रज्वलित दीपक है इनके समीप पहुँच जाओ अरिहंत भगवान का प्रतिबिंब भी अरिहंत के समान है, समवशरण में जाकर के अरिहंत भगवान की पूजा करने से जो पुण्य आपको प्राप्त हो सकता है, जितने पाप का संवर हो सकता है, पूर्वबद्ध कर्मों की निर्जरा हो सकती है उतना ही शुभ आश्रव, पाप का संवर, पाप की निर्जरा मंदिर में भगवान की पूजा करने से हो जायेगी। चौथे काल के मुनियों की पूजा करने से जो फल मिलता है पंचम काल के मुनियों की पूजा करने से भी वही फल मिल जाएगा जो तीर्थंकर की पूजा से मिल सकता है, पवित्र भावना के साथ कोई श्रावक सामान्य मुनि को आहार दान देकर उतना पुण्य प्राप्त कर सकता है जितना उस समय तीर्थंकर को आहार दान देने से प्राप्त होता था

किन्तु प्राप्त करने के लिए हमारा हृदय वैसा ही होना चाहिए जैसा उनका होता है महानुभाव! मात्र आपसे इतना ही कहना है कि अपने दीपक को प्रज्ज्वलित करो, अंधेरे में कब तक बैठे रहोगे और किसकी इंजारी कर रहे हो क्या कोई और आकर तुम्हारा दीया जलायेगा, नहीं संभव ही नहीं है जलाना तो तुम्हें ही है, चाहे आज जलाओ चाहे अभी चाहे कल। जब भी जलाओगे तुम्हें ही जलाना पड़ेगा, अपने घर का दरवाजा तुम्हें ही खोलना पड़ेगा। एक कंजूस सेठ कमरे में नोट गिन रहा था, बड़ी सी अलमारी में बैठ गया, संयोग की बात अलमारी का दरवाजा बंद हो गया और उसकी चाबी नहीं, अंदर से खुलता नहीं। अब उसे कौन खोल सकता है कोई नहीं, ऐसे ही अभव्य को तो कोई मोक्ष में पहुँचा नहीं सकता किन्तु जिसके पास जीवन की चाबी है भले ही बंद हो गया वह खोल सकता है कमरे के बाहर निकल सकता है उसे राह दिखाने आपके द्वार पर कोई दस्तक देने आ सकता है कोई भी संत, महात्मा, परमेष्ठी आये, इस काल में अरिहंत तो आते नहीं हैं। सिद्ध तो किसी काल में आते ही नहीं हैं वे तो जाते ही जाते हैं। आचार्य उपाध्याय साधु आते हैं तुम्हारे पुण्य का उदय है दीपक के थोड़े निकट रहने वाले सुलभ ऐलक आर्यिका की संगति प्राप्त हो रही है, दीपक से थोड़ा दूर धुंधले प्रकाश में ऐसे व्रती प्रतिमाधारी श्रावकों की आपको संगति प्राप्त हो रही है। किन्तु ये सब प्रेरणा है कि आप अपने दीपक के पास आ सको, हम तो केवल इतना पता देने आये थे कि आप भी किसी जलते हुए दीपक के पास पहुँचे और अपने बुझे हुए दीपक को जलाने का सम्यक् पुरुषार्थ करें, इसी में आपकी आत्मा का हित है यही कल्याण का मार्ग है, शाश्वत श्रेय मार्ग है। आप उसे प्राप्त करें, उसके फल को प्राप्त करें ऐसी मैं आपके प्रति मंगल भावना भाता हूँ इसी मंगल भावना के साथ अपनी वाणी को विराम देता हूँ।

''शांतिनाथ भगवान की जय।''

कौन धनी त्रिशला के महल का

संसार का प्रत्येक प्राणी धन और वैभव चाहता है, वह निर्धन रहना नहीं चाहता।आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती ने तो यहाँ तक कह दिया है कि एकेन्द्रिय जीव के अन्दर भी परिग्रह की संज्ञा है यदि कहीं धन है तो वृक्ष की जड़ वहीं तक चली जाती है और उस खजाने को वह अपनी जड़ों के बीच में लपेट लेता है। इससे सिद्ध होता है कि एकेन्द्रिय जीव तक धन चाहता है तो आप तो संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्य हैं। क्या आप धन नहीं चाहते, संसार का एक भी ऐसा जीव नहीं है जो धन नहीं चाहता जो नहीं चाहता तो कुछ भी नहीं चाहता यदि चाहता है तो धन चाहता है, सुख चाहता है, शांति चाहता है, ज्ञान चाहता है, अनुकूलता चाहता है, उच्चता चाहता है जब तक जीवन में कोई भी एक इच्छा, वांछा, अभिलाषा शेष रहेगी तो उसमें धन की इच्छा अवश्य रहेगी। आप सोच रहे होंगे क्या मुनि महाराज भी धन चाहते होंगे? क्या वे साधु संत, फकीर कुछ नहीं चाहते? क्या वे महात्मा भी कुछ चाहते हैं आप कहते हो कि यदि चाहते हैं तो धन चाहते हैं, नहीं चाहते तो, कुछ नहीं चाहते। या तो आप ये सिद्ध करके बताओ कि संत महात्मा कुछ नहीं चाहते या फिर धन चाहते हैं। संत महात्मा दोनों प्रकार के हैं जो आत्मा में लीन हैं, निश्चय में लीन हैं, शुद्धोपयोग को प्राप्त हो चुके हैं निर्विकल्प अवस्था को प्राप्त हो चुके हैं उस समय उनकी समस्त चाहनायें नष्ट हो जाती हैं।

व्यक्ति झुकता वह है जिसे कुछ चाहिए, जिसे कुछ नहीं चाहिए अपने आप में लीन है, अपने आप में पूर्ण है, अपने आप में स्वतंत्र है अपने आप में संतुष्ट है उसे किसी से मांगने की, चाहने की आवश्यकता ही नहीं है। महाराज जी! जो साधु आत्मा में लीन नहीं हैं व्यवहार धर्म का पालन कर रहे हैं तो क्या वे धन चाहते हैं? वे धन चाहते हैं, महाराज जी यदि वे धन चाहते होते तो धन का त्याग करके साधु क्यों बन गये? हाँ ये बात तो सही है, किन्तु फिर भी धन चाहते हैं, बात समझ में नहीं आती किन्तु कौन सा ? जो शाश्वत धन है।अविनश्वर धन की चाह साधु को होती है। बिना चाहे तो साधु बन ही नहीं सकता। चाह जब तीव्र हो जाती है जो कुछ उसे मिला है उससे वह संतुष्ट नहीं है, क्योंकि उसके पास जो कुछ भी है क्षणभंगुर है विनश्वर है, नष्ट हो जाने वाला है। इसलिए साधु वह बनता है जिसकी कामना वांछा अविनश्वर धन-सम्पत्ति को प्राप्त करने की होती है, और ध्यान रखना हम कहते हैं व्यवहार की भाषा में उन्होंने ये छोड़ दिया, माता-बहिनें भजन में गाया करती हैं-सब कुछ छोड़ करके यथाजात नग्न हो गये, शरीर पर एक धागा लंगोटी भी नहीं रखी, सब कुछ त्याग कर दिया। एक मयूर पिच्छिका रखी, जीवों की रक्षा करने के लिए, कमण्डलु रखा शुद्धि के लिए या कोई शास्त्र रखा स्वाध्याय करने के लिए, जिससे अच्छी-अच्छी बातें पढ़कर के अपना मन लगाये रहें और भव्य प्राणियों को, सुधीजनों को धर्म की चार बातें बता सकें। सब कुछ छोड़ दिया, आपको बड़ा आश्चर्य होता है यह सुनकर की भरत चक्रवर्ती ने एक सैकेण्ड भी नहीं लगाई छः खण्ड का राज्य छोड़ने में, 96 हजार रानियों का त्याग करने में, नवनिधि चौदह रत्नों को कैसे छोड़ दिया होगा? हमसे कोई कहे, कि तुम्हारे पास जो सूटकेस है उसे छोड़ दो अरे, क्यों छोड़ दूँ तुम्हारे पिता जी का है जो छोड़ दूँ। वह नहीं छोड़ सकता, तुम्हारे हाथ में यदि सोने की अंगूठी है कोई मांगे तो दे दोगे। क्या, नहीं दोगे, चाहे लोहे का छल्ला हो, चाहे तांबे का छल्ला हो चाहे हीरे-मोती, सोने-चांदी की अंगुठी हो तुम उसे दे दोगे किन्तु कब, कैसे और क्यों?

यदि तुम्हारे हाथ में लोहे की अंगूठी है और उसके बदले तुम्हें कोई तांबे की अंगूठी देना चाहेगा तो तुम कहोगे ठीक है लोहे से तो बहुत अच्छा है लाओ, यदि तुम्हारे हाथ में तांबे की अंगूठी है और कहा जाये इसके बदले चांदी की ले लो तो तुम जल्दी से ही ले लोगे, कहीं कहकर लौट न जाये और यदि तुम्हारे हाथ में चांदी की अंगूठी हो और कोई बदले में सोने की अंगूठी दे तो तुम कहोगे पहले सोना चैक तो करो और सही निकला तो तुम कहोगे भईया जल्दी से बदल ले मैं चांदी की बहुत सारी अंगूठी लाता हूँ तू सोने की ले आ, यदि तू डायमण्ड की ले आयेगा तो मैं तुझे सोने की दे दूँगा। अरे अभी तो तुम कह रहे थे कि दे नहीं सकते और अब तुम देने को तैयार हो गये। सामने वाले व्यक्ति ने एक बार कह दिया तू चांदी की दे दे सोने की लेले तो तुम बड़ी जल्दी तैयार हो गये। महानुभाव! एक कृपण से कृपण व्यक्ति जो अपनी कोई चीज देने को तैयार नहीं आज इतना देने को तैयार है, किन्तु शर्त ये है कि बदले में उसे उससे अच्छी चीज मिलना चाहिए, ऐसे ही भरत चक्रवर्ती ने छः खण्ड, नवनिधि, चौदह रत्न, ९६ हजार देवांगनाओं के समान सुन्दर रानियों को छोड़ दिया क्यों? क्योंकि उन्हें छोड़े बिना वह (सिद्ध पद) नहीं मिल सकता। सब कुछ पाने के लिए सब कुछ छोड़ना पड़ता है। जो, कुछ छोड़ने के लिए जी कतराते हैं वह सब कुछ जीवन में पा नहीं सकते। महानुभाव! आप सुन रहे थे कि साधु भी धन चाहता है, हम देख लें कि धन किसे कहते हैं? आप लोग उसे धन कहते हैं जो धर्म को नष्ट करके आये, धन का अर्थ है ध-धर्म, न-नष्ट अर्थात् जो धर्म को नष्ट करके आये भौतिक सम्पत्ति, नोटों के बंडल, सोने-चांदी के ढेर, हीरे-मोती, पाषाण के खण्ड इसे आप कहते हैं धन। नीतिकार कहते हैंः-

गोधन, गजधन, बाजधन और रत्न धन खान।
जब आवे संतोष धन सब धन धूल समान।

नीतिकार की दृष्टि में गाय, भैंस आदि पशु धन कहलाता है, अनाज आदि धन कहलाता है, राज्य, रत्नों का ढेर सब धन ही है साधु इस धन को

नहीं चाहते, जो धन नष्ट हो जाये उसे साधु नहीं चाहता क्योंकि साधु स्थायी धन को प्राप्त करना चाहता है। श्रावक का स्थायी धन से परिचय नहीं है इसलिए वह उन अस्थायी धन पर रीझ जाता है। एक अंधा व्यक्ति अपना कटोरा लेकर भीख माँगता फिरता, उसके कटोरे में कोई नोट डाल दे तो वह उठाकर के फैंक देता किन्तु कोई पैसे डाल दे तो वह उसे रख लेता उससे पूछा भाई तुम नोट क्यों अलग कर देते हो बोला कागज का टुकड़ा है वह, अरे भईया! वह कागज का टुकड़ा नहीं नोट है आप ये १०० सिक्के इकट्ठे करोगे उससे तो यह एक नोट अच्छा रहेगा, बोला मुझे पहचान नहीं है। जब तक पहचान नहीं है तब तक व्यक्ति नोट फैंककर के बाहर के सिक्के ले लेता है ऐसे ही जब तक तुम्हें स्थायी मार्ग की पहचान नहीं है तब तक तुम अस्थायी, क्षणिक सुखाभास के पीछे दौड़ जाओगे, जब तुम्हें पहचान हो जायेगी तब तुम सहजोपलब्ध भोगों की सामग्री को त्याग दोगे, आचार्य पूज्यपाद स्वामी ने लिखा-

यथा-यथा समायाति संवित्तौ तत्त्वमुत्तमम्।
तथा-तथा न रोचंते विषयाः सुलभा अपि।

सुलभ विषय सामग्री, भौतिक सुख, सम्पत्ति समृद्धि रुचती नहीं है , ज्यों-ज्यों आत्मा का रस आने लगता है त्यों-त्यों व्यक्ति बाहर की वस्तुओं से विरक्त होता चला जाता है और व्यक्ति ज्यों-ज्यों बाहर की वस्तुओं से विरक्त होता जाता है त्यों-त्यों उसके अंदर आत्मा का रस निःसृत होने लगता है। महानुभाव! साधु कौन-सा धन चाहते हैं फिर अगला धन है ज्ञान धन। रत्नत्रय धन, जिनगुण सम्पत्ति वह धन है आप लोग पढ़ते भी हैं- दुक्कक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण सम्पत्ति होऊ मज्झं और धन है देव-शास्त्र गुरु आप पढ़ते हैं- देव शास्त्र गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार"

ये तीन रत्न हैं अथवा सम्यक् दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक् चारित्र तीन रत्न हैं ये सबसे श्रेष्ठ धन है एक बार प्राप्त हो गया तो संसार का कोई

भी प्राणी आपकी आत्मा से छीन नहीं सकता है, आपकी श्रद्धा को कौन छीन सकता है, आपका ज्ञान, आपका ध्यान आपकी शांति को कौन छीन सकता है, आपका संयम आपकी क्रियाचर्या सब आपके हैं कौन छीन सकता है। श्रावक के पास भौतिक धन नहीं है तो वह गरीब है कंगाल है और साधक के पास आत्म ज्ञान नहीं है तत्त्व ज्ञान नहीं है, भेद ज्ञान नहीं है तो वह साधु भी कंगाल है दरिद्र है, तत्त्व ज्ञान सहित साधु होता है और भौतिक साधन से सम्पन्न श्रावक होता है, धन की और भी परिभाषायें हैं-

विदेशेषु धनं विद्या व्यसनेसु धनं मतिं।
परलोके धनं धर्मः शीलं सर्वत्र वैधनं।।

विदेशेषु धनं विद्या- विदेश में विद्या काम करती है, जिसके पास कोई कला है, विद्या है, हुनर है तो चाहे वह बिना धन के जाये व्यापार में कमाकर ही लायेगा और सम्पन्न हो जाएगा, शांति से अपना जीवन यापन कर सकता है।परदेश में धन कोई छीन लेगा तो अपना हुनर लेकर जाओ।व्यसनेसु धनं मतिं व्यापार में प्रज्ञा की आवश्यकता है। प्रज्ञा जिसकी अच्छी है जो चतुर है ऐसा व्यक्ति व्यापार में कुशल होता है। पूंजी कितनी भी लगाओ बुद्धि नहीं है तो लाभ के स्थान पर घाटा हो सकता है और जो व्यक्ति समझदार है समझ सकता है मौसम को कब क्या घटित हो सकता है वह छोटी सी पूंजी से भी अच्छा व्यापार कर सकता है। "परलोके धनं धर्मः" परलोक में धर्म ही धन है, परलोक में धर्म साधना करके जाना,और कुछ तो साथ जाएगा नहीं।एक धर्म ही ऐसा है जो व्यक्ति के साथ दूसरे भवों तक जाऐगाा।"शीलं सर्वत्र वैधनं" नीतिकार कहते हैं शील सब जगह नियम से सबका धन होता है। वह कभी भी किसी को हानि नहीं पहुँचाता है शील एक ऐसी चीज है जिसमें कभी पाप नहीं लगता। महानुभाव! फिर हम कौन से धन की चर्चा कर रहे हैं । जो आचार्य चारों तरफ से कल्याणदायी उपदेश देने वाले, कल्याण करने वाले ऐसे सहज और सरल कुलभद्र स्वामी सार समुच्चय नामक ग्रंथ में लिखते हैं-

श्रुतं व्रतं तपो येषां धनं परम दुर्लभः।
येषां ते प्रोक्तः धनिनः शेषाः निर्धनिना मतः।।

आचार्य महोदय कह रहे हैं धन तीन हैं श्रुत, व्रत और तप। श्रुत कहिये तो ज्ञान, व्रत कहिये तो क्रिया और तप कहिये तो श्रद्धा की प्रगाढ़ता। श्रद्धा ज्यों-ज्यों प्रगाढ़ होती जाती है व्यक्ति त्यों-त्यों तपस्या की ओर आगे बढ़ता है उसे मना भी करो तो कहेगा भईया कर्मों का क्षय तो मुझे ही करना है । चाहे आज करूँ चाहे कल, मुझे ही चुकाना है अपना कर्जा, जो कर्म पहले किये हैं उन्हें नष्ट मुझे ही करना है,तो श्रुतं-अर्थात् स्वाध्याय,जिसके पास स्वाध्याय की कला है श्रुधातु होती है सुनने के अर्थ में, 'त' तल्लीन होकर सुना जाये, जो श्रेयोमार्ग का कारण हो, जो श्री अंतरंग बहिरंग लक्ष्मी का कारण हो वह स्वाध्याय है और स्वाध्याय के मायने अपनी आत्मा का अध्ययन करना, अपनी आत्मा का स्वभाव क्या है इसे हम ऐसे ही नहीं जान सकते, इसलिए शास्त्र का आधार लेकर अपनी आत्मा का अवलोकन करना है, अपनी आत्मा को समझना, जानना अपनी आत्मा को पहचानना। व्रत का अर्थ होता है हिसांदि पाँच पापों का त्याग, ये तो रूढ़िवशात् आप कहते हैं कि हम भक्तामर के, णमोकार के व्रत कर रहे हैं ये तो आपके सीमित व्रत हैं कुछ समय के लिए हैं, वास्तव में व्रत आचार्य श्री उमा स्वामी जी महाराज के शब्दों में तो यही है-

"हिंसानृत स्तेया ब्रह्म परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम्"

हिंसा, झूठ, चोरी,अब्रह्म (कुशील), परिग्रह से विरक्त है, वही वास्तव में व्रती है, व्रत अर्थात् सम्पूर्ण पापों का त्याग वह भी नवकोटि से। यह त्याग वही कर सकता है जिसने संसार की असारता को जान लिया हो, जो शाश्वत अवस्था को समझता है, जिसने अपनी आत्मा की शाश्वत अवस्था के बारे में सुना हो, जाना हो, पढ़ा हो, अनुभव किया हो, ऐसा व्यक्ति संकल्प लिये बिना नहीं रह सकता, व्रत लिए बिना नहीं रह सकता और जिसके पास ये व्रत नहीं हैं।

नियमेन बिना प्राणी पशु रेव न संशयः

व्रत नियम संयम के बिना व्यक्ति पशु के समान ही है और संसार में सबसे गरीब वही है जिसके पास स्वाध्याय करने का समय नहीं है, संसार में सबसे गरीब वही है जो अपने शरीर से कोई व्रत नहीं पाल सकता, न कभी हिंसा का त्याग कर सकता न झूठ का, न चोरी का, न अब्रह्म का, न परिग्रह का, वह कहता है मेरे शरीर से पाप तो बहुत हो जाते हैं किन्तु अपने शरीर से मैं व्रत नहीं पाल पाता, वह संसार का बड़ा हीन व्यक्ति है उसकी दशा बड़ी दयनीय है, सोचनीय है क्या जिस शरीर से पाप कर सकता है पुण्य नहीं कर सकता, जिन वचनों से, मन से पाप कर लेता है पुण्य नहीं कर सकता। अरे! कितना हीन व्यक्ति है, कितना अभागा है कि उसके मन, वचन, काय पाप के कार्यों में जाते हैं उसका धन पाप कर्मों में लग जाता है आचार्य महोदय कहते हैं तपो येषां तप अर्थात् इच्छाओं का निरोध' जो व्यक्ति इच्छाओं का निरोध करने में समर्थ है जिसने अपनी सभी इच्छाओं को रोक दिया है वह वास्तव में धनी है। इच्छाओं का कुआँ जब खाली हो जायेगा तब उस कुयें में कोई भी बाल्टी डाली जाये उसमें पानी नहीं आयेगा, ऐसे ही हमारे मन में जब कोई इच्छा पैदा न हो तो संसार की कितनी ही अच्छी-अच्छी वस्तुएँ सामने हों वीतरागी प्रभु के सामने उनका कोई महत्व नहीं। महानुभाव! तपस्या-भोजन पानी का त्याग करना नहीं है। उपवास करना भी है, ऊनोदर करना भी है, विविक्त शय्यासन भी अंतरंग तप है, किन्तु मूल में तप की परिभाषा है इच्छाओं का निरोध। "धनिनः परम दुर्लभं" ऐसा(श्रुतं-व्रतं तप रूपी)**धन संसार में महादुर्लभ है ये संसार में सबके पास नहीं होता।**

मूढे पाषाण खण्डेषु रत्न संज्ञा विधीयते

मूर्ख व्यक्ति पाषाण के टुकड़ों को रत्न की संज्ञा देते हैं, अरे इस पाषाण के टुकड़ों को जोड़कर अपने आप को धनी मानते हो तो तुममें और इन मूर्खों में क्या अंतर रहा। एक बालक हाथ में चमकते पत्थर लेकर कहता है कि ये रत्न हैं, कागज के टुकड़ों को नोट बनाकर बच्चे आपस में खेलते हैं

या मिट्टी के घरोंदे बनाकर खेलते हैं और वह बच्चा कुर्सी पर खड़ा होकर कहता है पापा मैं बड़ा हो गया, जैसे कौआ मंदिर के शिखर पर खड़ा होकर कहे मैं बहुत बड़ा हूँ। पुद्गल के पत्थरों को रखने से तुम अपने को बड़ा कहते हो। बड़ा व्यक्ति बनता है बड़प्पन से। आत्मा बड़ी होती है आत्मा के गुणों से जो गुणों से बढ़ता है, निःसंदेह उसकी आत्मा बड़ी होती है धन से संसार में कोई भी बड़ा नहीं होता।

महानुभाव!

जो धन बड़ा बनाने वाला है उस धन से आज तक आपका परिचय ही नहीं हुआ, अभी तो तुम बच्चों की तरह से काँच के टुकड़ों को पकड़ कर के कहते हो कि तिजोरी में रत्न रखे हैं, जो नोट के बंडल हैं जिन पर भारत सरकार की मोहर लगी है। वचन लिखा है मैं धारक को इतने रुपये देने का वचन देता हूँ। यदि ये नोट चलन से बाहर भी हो गया तब भी आपको उस नोट के बराबर सोना दे दिया जायेगा। और यदि वचन न हो, मोहर न हो, नोटों के बंडल होते हुए भी कंगाल हो गया किन्तु धन वह होता है जिसे कोई छीन न सके धन वह आत्मवैभव है जिसे कोई छीन न पाये वही सच्चा धन होता है, भौतिक धन किसे मिलता है जो भौतिक धन का त्याग करता है जिसने भी भौतिक धन का त्याग किया उसे मिला, जिसने चक्रवर्ती जैसे पद को प्राप्त कर भगवान की भक्ति की हो ऐसा व्यक्ति सौधर्म इन्द्र बनने का अधिकारी होता है चक्रवर्ती कौन होता है जो अपने पुण्य को चक्रवर्ती ब्याज की तरह से निरंतर बढ़ाता ही रहता है वह चक्रवर्ती होता है कोई वस्तु तुम्हारे पास है तुमने उसका त्याग किया तुम्हें उससे उत्कृष्ट वस्तु मिल जायेगी।

महानुभाव!

कोई भी तीर्थंकर महापुरुष हो वह पुण्य के बिना तो बना नहीं। जब पुण्य है तो कहते हैं पुण्य ऐसा प्रकाश है जिस प्रकाश में आत्मा गमन करती है उसकी परछाईंयाँ भिन्न-भिन्न पड़ती हैं वे परछाईयाँ हैं, कोई लक्ष्मी है, कोई समृद्धि है, कोई भौतिक सुख है, कोई इष्ट जन है ये सब परछाईयाँ है पुण्य

की। कई बार आप कहते हैं कि लक्ष्मी तो पुण्य की चेरी है पुण्य तेरे पास से चला जाएगा तो वह लक्ष्मी भी चली जायेगी। जब तक पुण्य का काल है , तब तक पुण्य की आज्ञा में रह सकती है किन्तु तेरी आज्ञा में नहीं रह सकती, लक्ष्मी, जिसके विषय में लोग कहते हैं यह वेश्या की भाँति चंचला है, बिजली की चमक की तरह से है इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता, लक्ष्मी भोगने के योग्य तो है परन्तु विश्वास करने के योग्य नहीं है। परमात्मा भोगने में तो नहीं आता किन्तु विश्वास करने के योग्य है, परमात्मा विश्वास के योग्य है और लक्ष्मी भोगने के योग्य, लक्ष्मी तो चंचला है पंख लगा के आती है उड़ जाती है। जो पंख लगाकर के उड़े फिर भी दिखाई दे जाए उसे पकड़ने का प्रयास किया जा सकता है। किन्तु जो बिना पंख के उड़ जाए, कपूर की डली रखी है पंख लगा के उड़ेगा क्या?नहीं, देखते ही देखते कपूर उड़ गया, उसे पकड़ भी नहीं सकते। ओस आपको दिखाई दे रही है किन्तु उड़ जाती है सूर्य का उदय होते ही पकड़ में आती है क्या? पानी वाष्प बन करके उड़ जाता है। यदि लक्ष्मी पंख लगा करके उड़ती तो उसे जाल डाल कर पकड़ लेते किन्तु लक्ष्मी को कभी पकड़ा नहीं जा सकता। यदि जाल डालोगे तो निकल जाएगी, जब तक पुण्य का उदय रहता है वह साथ रहती है, रहती ही नहीं पीछा करती है लक्ष्मी पुण्यात्मा का पीछा करती है और पापी को छोड़ करके भागती है। पापी लक्ष्मी का पीछा करता है और पुण्यात्मा लक्ष्मी को छोड़कर भागे तो भी लक्ष्मी उसका पीछा करती है। पापी कैसे है जैसे कोई व्यक्ति अपनी परछाई को पकड़ने के लिए दौड़ रहा है। वह दौड़ता जा रहा है, परछाई आगे-आगे जा रही है, वह परी की तरह से है, दिखाई तो देती है पकड़ में नहीं आती। और पुण्यात्मा कैसा है, उसी परछाई को पीठ देकर भाग रहा है फिर भी परछाई उसका पीछा नहीं छोड़ रही। पुण्यात्मा कभी पकड़ता नहीं और पापी पकड़ने का प्रयास करता है किन्तु पकड़ पाता नहीं। पुण्यात्मा पकड़ता नहीं पकड़ना चाहता नहीं, वह लक्ष्मी उसकी पक़ड में भी आ जाए और कहे मैं तुम्हें छोड़कर नहीं जाऊँगी, वह कहेगा मुझे तुम्हारी आवश्यकता नहीं, तुझ जैसी

चंचला पर मुझे विश्वास नहीं। मैं तो उसे चाहता हूँ जो मेरी सती बन करके रहे, जो मेरे साथ सती हो जाए, जहाँ मैं जाऊँ मेरे साथ वहीं जाए, मुझे वेश्या की तरह नहीं चाहिए। आज इसकी है, कल उसकी है, परसों किस की होगी कह नहीं सकते। ऐसी वेश्या स्वभाव वाली लक्ष्मी को जो विश्वास के योग्य मानता है वह निःसंदेह अपनी आत्मा को ठग लेता है तो लक्ष्मी विश्वास के योग्य तो नहीं है हाँ! उपयोग के योग्य हो सकती है। भला आदमी तो उपयोग ही नहीं करेगा वह कहेगा पड़े हो चक्कर में, छोड़-छाड़ कर भाग जाओ ना जंगल में। और जो कम भला आदमी है वह कहेगा अच्छे से इसका उपयोग करूँगा। जो बुरा आदमी है वह उसका दुरुपयोग करेगा जैसे वैश्या आकर खड़ी हो जाए किसी साधु के पास तो वह क्या करेगा? उसकी ओर अपनी पीठ कर लेगा, वहाँ से चला जायेगा और यदि किसी कम भले आदमी के पास वेश्या आ जाए तो उसे समझायेगा देखो यह अच्छा नहीं है अपने इस अमूल्य नर भव को क्यों गँवाती हो और थोड़ा बुरा आदमी है तो उससे प्यार की बातें करेगा, हँसी-मजाक करेगा और ज्यादा बुरा है तो उसका सेवन करेगा तो लक्ष्मी तो वेश्या की तरह से है। इसका ज्यादा सेवन करना उचित नहीं है और धन पैर के जूते के बराबर है। पैर में जूता पहनना ठीक है तब कि जब कहीं काँटो वाले रास्ते पर जाओ तो पैर में जूता पहन लो और यदि फूलों के रास्ते पर जाओ तो जूता पहनने की आवश्यकता नहीं है। मोक्ष का मार्ग काँटों का मार्ग नहीं मैं तो कहता हूँ कि फूलों का मार्ग है। इस पर धन के जूते पहनना जरूरी नहीं है। नंगे पैर जाओगे तो ज्यादा अच्छा लगेगा। मोक्ष का मार्ग तो फूलों का मार्ग है यहाँ पर धन रूपी जूतों की आवश्यकता नहीं है। जूतों की आवश्यकता तो कंकरीले, पथरीले मार्ग पर होती है। धन की आवश्यकता तो वहाँ होती है जो आपका जीवन है काँटे भरा जीवन, गृहस्थ जीवन, प्रतिकूलताओं से युक्त जीवन वहाँ धन जूते की तरह से आवश्यक है किन्तु आत्मा का धन(ज्ञान) शस्त्र की तरह से होता है। यदि आप कहीं जा रहे हैं और आपके पास शस्त्र हैं तो आप सुरक्षित हैं। महानुभाव, आत्मविश्वास हो

कि लक्ष्मी को छोड़ना अच्छा है। मान लो आवेश में छोड़ दिया और बाद में लौटकर नहीं आयी तो फिर तुम उसके पीछे-पीछे जाओगे। जैसे चंद्रनखा लक्ष्मण के पास आयी, लक्ष्मण ने कह दिया मैं तुम्हें स्वीकार नहीं कर सकता,मेरे बड़े भाई के पास जाओ। राम के पास गई तो बोले तुम पहले लक्ष्मण के पास गई थीं इसीलिए अब मैं तुम्हें स्वीकार कर नहीं सकता। तुमने पहले छोटे भाई को चाह लिया तो तुम मेरी पुत्रवधू, पुत्री के समान हुईं। लक्ष्मण के पास लौटकर आई तो लक्ष्मण बोला अब मैं आपको स्वीकार नहीं कर सकता, पूछा क्यों? बोले तुम बड़े भाई के पास चली गईं, तुमने बड़े भाई को अपने मन में चाह लिया, बड़ा भाई पिता के तुल्य होता है तुम मेरे लिए माँ के तुल्य हो गईं। तो आवेश में आकर के उसे पीछे मुड़कर देखना पड़ता है और जो बुद्धिपूर्वक त्याग करता है तब वस्तु चाहे सामने खड़ी हो तब भी आँख बंद कर लेता है।

महानुभाव! नीतिकार कहते हैं १०० हाथों से कमाओ, हजार हाथों से दान करो तुम्हारा खजाना कभी खाली नहीं हो सकता, जो दो हाथ से कमाता है और एक हाथ से दान करता है उसका खजाना हमेशा खाली रहता है। इसीलिए कहा दान तो दोनों हाथों से दो। अभिषेक करो दोनों हाथों से करो। कमा भले एक हाथ से लेना किन्तु दान हमेशा दोनों हाथों से ही देना चाहिए। जो दोनों हाथों से लुटाता रहता है उसका खजाना कभी खाली नहीं होता। महानुभाव, भगवान महावीर स्वामी जब राजकुमार अवस्था में थे उस समय एक मौन वार्तालाप हुआ लक्ष्मी का व महावीर स्वामी का। लक्ष्मी ने कहा मैंने सुना है, तुम माता-पिता को छोड़कर राज्य को छोड़कर दीक्षा लेने जा रहे हो, कुमार वर्द्धमान ने कहा तुमने ठीक सुना है मैं दीक्षा लेने जा रहा हूँ। अरे! क्या तुम मुझे छोड़कर चले जाओगे। मैं तुम्हारे पीछे घूमती हूँ। तुम्हारे में तो मेरे प्राण बसते हैं। मैं तुम्हारे बिना कैसे जी सकूँगी? लक्ष्मी की प्यार की ये भाषा अलग होती है वेश्या की तरह से प्यार भी कई प्रकार का होता है। एक प्रेम वह जो आँख बंद करके किया जाता है अपने प्रभु से, गुरु से, परमात्मा से।

वह जो आँख बंद करके किया जाता है अपने प्रभु से, गुरु से, परमात्मा से। हमारे परोक्ष में है तब भी आँख बंद करते ही सामने आ जाते हैं एक प्रेम वह है जो आँख बंद तक किया जाता है। जब तक आँख खुली है तब तक प्रेम है आँखें मुंदी तो प्रेम गया। तीसरे प्रकार का प्रेम वह है जो आँखें खोल करके, आँखों से मुस्कराते हुए किया जाता है। पहला प्रेम जो है वह आँख बंद करके किया जाता है वह भक्त के द्वारा होता है भगवान के लिए। दूसरा प्रेम जो आँख बंद तक किया जाता है वह माँ का प्रेम होता है अपने पुत्र के लिए जब तक आँखे खुली हैं तब तक माँ को अपने बेटे के लिए प्रेम रहेगा अस्वस्थ भी पड़ी है तब भी बेटे के लिए दया है, करुणा है, स्नेह है, वात्सल्य है। मृत्यु शैया पर भी पड़ी माँ की आँखों में आँसू अपने बेटे के लिए हैं मेरा बेटा छोटा है उसका क्या होगा? मृत्यु की गोद में आ गई तब भी आँखें जब तक खुली हैं माँ का प्रेम अपने पुत्र के लिए रहेगा। और तीसरा प्रेम है वेश्या का। लक्ष्मी ने मौन भाषा में राजकुमार महावीर से कहा तुमने ऐसा सोच कैसे लिया कि तुम मुझे छोड़कर चले जाओगे। मैं तुम्हें नहीं छोडूँगी, वर्द्धमान ने कहा तुमने मुझे अभी जाना नहीं, तुमने मुझे विश्व के अन्य पुरुषों की तरह समझ लिया, मैं तुम्हारी समझ के बाहर हूँ। मैं वह हूँ जो देखने में आता हूँ पर पकड़ में नहीं आता। और कई चीज ऐसी होती हैं जो अनुभव में आती हैं, पकड़ में नहीं। लक्ष्मी ने कहा चाहे तुम देखने में आओ, चाहे पकड़ने में आओ, चाहे देखने या पकड़ने दोनों में न आओ किन्तु मेरा संकल्प है तुम्हें छोडूँगी नहीं। महावीर स्वामी ने कहा अच्छा ऐसी बात है देख लेंगे अब मैं दीक्षा के लिए चलता हूँ वे वर्द्धमान जिनके गर्भ में आते ही-

श्री वृद्धि सर्वत्र हुई थी, जनता ने सुख पाए थे,
इससे जग में त्रिशलानंदन, वर्द्धमान कहलाए थे।

तो वर्द्धमान कहते हैं बस मैं चलता हूँ। चंदना भी समझाने के लिए आई वर्द्धमान को, वर्द्धमान मैंने सुना है तुम दीक्षा लेने की बात कह रहे हो, हाँ मौसी, तुमने ठीक सुना है, लेकिन क्यों? इसीलिए क्योंकि संसार में मुझे कोई

भी सारभूत वस्तु दिखाई नहीं देती।चंदनबाला समझाने लगी तब वर्द्धमान ने पूछा मौसी तुम शादी क्यों नहीं करा लेतीं बोली शादी करने से कोई लाभ नहीं, सुख-शांति नहीं है। आत्मा का सुख शादी करके प्राप्त नहीं किया जा सकता। जब तुम शादी नहीं करना चाहतीं, मानती हो संसार में दुःख है शादी के बाद, तो मुझसे शादी की बात क्यों करती हो? मुझे भी आत्मिक सुख को प्राप्त करना है जीव की शुद्धावस्था को पाना है। किसी के समझाने से नहीं समझे, ले ली दिगम्बर दीक्षा, बैठ गए ध्यान में लक्ष्मी ने देखा सोचा कब तक बैठे रहेंगे ध्यान में, कभी तो जाएँगे आहार करने, जैसे ही आहार करने श्रावक के यहाँ पहुँचे लक्ष्मी भी पहुँच गई पीछे-पीछे और कर दी रत्नों की वर्षा। महावीर स्वामी ने पीछे मुड़कर देखा अरे लक्ष्मी यहाँ भी आ गई। लक्ष्मी पीछे खड़ी-खड़ी इठला रही है मुस्करा रही है देखो छोड़कर आ गए लेकिन मैंने तो नहीं छोड़ा। तुम्हारा पीछा मैं छोडूँगी नहीं। महावीर स्वामी ने कहा ठीक ऐसी बात है आज से आहार का त्याग, मैं आहार ग्रहण नहीं करूँगा। बैठ गए ध्यान में, क्षपक श्रेणी चढ़ी और बन गऐ केवलज्ञानी। जैसे ही केवलज्ञानी बने सौधर्मेन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने बहुत बड़ा समोशरण रच दिया कि सैकड़ों चक्रवर्तियों की विभूति लाकर रख दी। वैभव, नीचे तो वैभव, ऊपर तो वैभव, अशोक वृक्ष, छत्र, सिंहासनादि सब भगवान महावीर स्वामी उसके बीच में, लक्ष्मी फिर इठला रही है अब कहाँ जाओगे? देखों यहाँ पर भी मैं हूँ। भगवान महावीर स्वामी ने कहा अच्छा तेरी इतनी हिम्मत उन्होंने समोशरण का भी त्याग कर दिया दिव्य ध्वनि खिरना बंद हुई और योग निरोध का निश्चय कर लिया, योग निरोध करने के लिए जैसे ही विहार किया तो चरणों के नीचे २२५ स्वर्ण कमलों की रचना हो गई। लक्ष्मी खुश हो रही हैं अब कहाँ जाओगे। मेरे हृदय पर ही पैर रखकर जाओगे, महावीर स्वामी ने कहा मैं तुझसे चार अंगुल ऊपर रहूँगा। तुझको स्पर्श नहीं करूँगा, और वर्द्धमान स्वामी ने योग निरोध किया मोक्ष गामी बन गए। लोग तो यह भी कहते हैं कि मोक्ष रूपी लक्ष्मी वहाँ पर इठला रही हैं महानुभाव! जो लक्ष्मी

अब कहाँ जाओगे? महानुभाव! जो लक्ष्मी यहाँ पर है वह मोक्ष में नहीं और जो मोक्ष में है वह यहाँ पर नहीं। संसार की यह लक्ष्मी विश्वास के योग्य नहीं है, गृह लक्ष्मी जो अपनी पत्नी के लिए संबोधित करते हैं मैं नहीं कहता कि वह विश्वास के योग्य नहीं है। किन्तु सत्यता तो यही है कि धन लक्ष्मी और गृह लक्ष्मी दोनों विश्वास के योग्य नहीं है। इन पर विश्वास करके व्यक्ति अपनी आत्मा के वैभव से वंचित रह जाता है। केवल ज्ञान लक्ष्मी व मोक्ष रूपी लक्ष्मी को प्राप्त करना है तो इन दोनों लक्ष्मी को छोड़ना पड़ेगा। इन्हें छोड़े बिना उनकी प्राप्ति हो नहीं सकती। महानुभाव!

आचार्य कुलभद्र स्वामी कह रहे थेः-

श्रुतं व्रतं तपो येषां धनं परम दुर्लभं।

येषां ते धनिना प्रोक्ता शेषाः निर्धन नामतः।

जिनके पास ये हैं वे ही धनी हैं शेष तो निर्धन हैं, दरिद्र हैं। आप सभी लोग भी यदि वास्तव में धनी बनना चाहते हैं वह कौन धनी त्रिशला के महल का? धनी यानि धन का स्वामी। धन के स्वामी तो वही हो सकते हैं धन जिनसे कभी अलग न हो और यदि धन अलग हो जाए तो यह तो अनात्मभूत लक्षण हुआ जैसे किसी दण्डी पुरुष का लक्षण दण्ड, जो अलग हो सकता है वह धनी नहीं। धनी धन का वही है जो एकमेक हो जायें। मेरी आत्मा और मेरी आत्मा के गुण ही धन हैं। बाहर का धन कभी सच्चा धन नहीं हो सकता। तो धनी बनो, त्रिशला के महल का धनी ही मोक्ष लक्ष्मी का धनी हो सकता है। यूँ तो आप अपनी माँ के महल के धनी हो, किन्तु तुम्हारी माता का महल माँ के पुण्य से है और हो सकता है यदि तुम्हारे भाग्य में न हो तो तुम्हें ना मिले किन्तु त्रिशला का महल उनके पुण्य से नहीं वर्द्धमान के पुण्य से सौधर्मेंद्र की आज्ञा से कुबेर ने उसकी रचना करवाई थी। वह जो महल बना उसका धनी मालिक कौन है? दर असल हम अपनी मालकियत दिखाते हैं सच्चे मालिक नहीं हैं। मालकियत दिखाना अलग बात है और मालिक होना अलग बात है। एक व्यक्ति मालिक होते हुए भी सब कुछ कर रहा है आप किराये के मकान

में रहते हैं उसका मालिक कौन है, अन्य व्यक्ति और उसका उपयोग कौन कर रहा है आप। आपने कोशिश की तो उसका उपयोग आप कर रहे हैं किन्तु जो मालिक है उसने आज तक उसका उपयोग नहीं किया। होटल में जो सामग्री है वह किसकी? होटल के मालिक की परन्तु उसने उसका उपयोग कभी नहीं किया। तो ऐसे ही मालिक और मालकियत दोनों में अंतर है। ऐसे मालिक होने का भी कोई लाभ नहीं जिसका तुम उपयोग न कर सको और ऐसी वस्तु का भी कोई लाभ नहीं जो हमसे कोई छीन ले, सच्चा मालिक वही है जो वस्तु का उपयोग भी करे और उसे कोई छीन न सके। यदि आप लोग भी वास्तव में धनी बनना चाहते हैं तो निर्धनपने को छोड़ो। पाप निर्धनपना है इसे छोड़ोगे तो पुण्य आएगा धनीपना आएगा। यहाँ-वहाँ की अज्ञानता की बातें निर्धनता है, ज्ञान की चार बातें धनीपना है। आपकी इन्द्रिय विषयों में स्वच्छंद प्रवृत्ति निर्धनपना है और तपस्या करना धनीपना है। आप स्वयं अपने आप के आत्मवैभव के धनी बनो। निर्धनता को छोड़ो निर्धनता को छोड़े बिना धनीपना नहीं आ सकता, धूप को छोड़े बिना छाया नहीं आ सकती, हम निर्धनपने को, गरीबी को अपनी टूटी झौंपड़ी को छोड़ना न चाहें और चाहें बन जायें धनी त्रिशला के महल के सम्भव है? त्रिशला के महल का धनी वो तब बना जब सोलहकारण भावना उसने पहले भायीं थीं। त्रिशला के महल का धनी वह तब बना जब त्रिशला के महल में उसे आसक्ति न थी, जब वह अपनी आत्म निधि का स्वामी बन गया। महानुभाव! इसीलिए आज आप कहते हैं कौन धनी त्रिशला के महल का फिर क्या कहते हैं, महावीरा, महावीर, महावीरा। जो महावीर है, वीर है। अच्छी बुद्धि वाला सन्मति है, जो शुरू से ही वर्द्धमान रहा हो, हीयमान, ह्रासमान न हो तभी वास्तव में त्रिशला के महल का धनी बना। इन्हीं गुणों को धारण करने वाला त्रिशला के महल का धनी बन सकता है। मेरी आप सभी लोगों के प्रति यही मंगल भावना है कि आप सभी त्रिशला के महल के धनी बनें। त्रिशला के महल के धनी, तीन लोक के धनी, सिद्ध शिला के धनी वही आपका और सभी का शाश्वत स्वभाव है

बस हमें उसी को प्राप्त करना है यही हमारा परम पुरुषार्थ होगा इन्हीं मंगल भावनाओं के साथ मैं अपनी शब्द श्रृंखला को विराम देता हूँ।

आई वान्ट पीस

कई बार जीवन में ऐसा होता है कि हम बहुत बड़ी-बड़ी बाते सोचते हैं किन्तु वे बातें हमारे सिर के ऊपर से निकल जाती हैं। जहाँ पर हम चल रहे हैं हमारा कर्तव्य है पहले वहाँ पर देखें, हमारी दृष्टि यदि सदैव मंजिल पर टिकी रहेगी तब निःसंदेह जहाँ पर कदम रखा जा रहा है वहाँ ठोकर नहीं लगेगी ऊपर-नीची जमीन होने से, ऊबड़-खाबड़ होने से हम टकरा करके गिर सकते हैं। इसीलिए वरना भविष्य की लंबी कल्पनायें करना, भविष्य के लिए बड़े-बड़े अरमान सजाना ये व्यक्ति के लिए तब तक लाभदायक नहीं होता जब तक वह वर्तमान के कदमों को ना सम्हाल सके। महानुभाव! आज चर्चा करनी है ''आई वान्ट पीस'' मैं समझता हूँ शायद ''every person want peace'' कोई चाहे देव हो, तिर्यंच हो, मनुष्य हो, नारकी हो, कोई भी प्राणी हो शांति चाहते हैं,Each & every creature wants peace '' तो इस बात को शायद आप स्वीकार करते हैं किन्तु मेरी धारणा कुछ Different है मैं यह स्वीकार नहीं करता कि संसार के सभी प्राणी शांति चाहते हैं सत्यता तो ये है कि मैं आप में से ही हूँ तो बड़ा मुश्किल है, आप में से कोई एक भी निकल आए जो कहे मैं शांति चाहता हूँ। कहना बहुत सरल है और आप कहते हैं महाराज जी! शांति तो सब चाहते हैं एक छोटे बालक से ले करके बड़े वृद्ध पुरुष तक सब शांति चाहते हैं, शांति कोई

विरला व्यक्ति चाहता है और एक कड़वा सत्य, बहुत कटु है, मैं बता दूँ तो सुन कर बड़ा आश्चर्य होगा, यहाँ तक इतने संत, महात्मा, ऋषि साधु हैं भारत वर्ष में, उनमें से भी सभी शांति नहीं चाहते। आप कहेंगे महाराज जी! आप कैसी बात कर रहे हैं, जिन्होंने गृह त्याग किया है क्या वे शांति नहीं चाहते, वे शांति किसी दूसरे प्रकार की चाहते हैं। उन्होंने शांति का label किसी और चीज पर लगा लिया है। कहने को आप भी कह सकते हो कि आप शांति चाहते हैं किन्तु आप वह चाहते हैं जिसे आपने अपनी धारणा में शांति मान लिया है। शांति मानने से शांति नहीं होती है। वास्तविक शांति ही शांति है। कोई व्यक्ति सूर्य को चन्द्रमा कह दे तो क्या सूर्य, चन्द्रमा हो जाएगा? कोई व्यक्ति चींटी को हाथी कह दे तो क्या चींटी हाथी हो जायेगी? किसी व्यक्ति के कहने से पहाड़ समुद्र हो जाएगा क्या? कोई दिन को रात कह दे तो रात कैसे होगी? ये धारणा तो संसार की अनादिकाल से चली आ रही है, इन धारणाओं के बीच फँसा हुआ मानव आज तक परम शांति को प्राप्त नहीं कर सका। शांति संसार में ना दुर्लभ है,ना दुःसाध्य है, ना दूर है, ना असंभव है। शांति तो हमारे पास है निकट है, बहुत सन्निकट है और यूँ कहें हमारे अन्दर ही शांति है किन्तु हमारे पास इतनी फुरसत कहाँ है कि हम देख सकें। अरे पेन तो तुम्हारे कोट की जेब में लगा हुआ है तुम बाहर दौड़ रहे हो, पूरे घर को छान मारा, पूरे मौहल्ले को देख लिया, पूरे नगर को देख लिया लेकिन जहाँ पर रखा है वहाँ तो देखा ही नहीं। एक यात्री यात्रा कर रहा था, दिल्ली से शिखर जी की ओर जा रहा था। विचारों में बहुत डूबा रहता था। उसने अपना टिकट कहीं रख दिया, ट्रेन में टी.टी. आया कहा है टिकट। वह यात्री अपना टिकट देखने लगा शर्ट की जेब, पेन्ट की जेब, सूटकेस खोला, बैग खोला सब फैलाकर डाल दिया। टी.टी. ने कहा कि ढूंढ लो तब तक मैं दूसरे को देखता हूँ थोड़ी देर बाद आया व्यक्ति टिकट खोज ही रहा था देखकर टी.टी. आगे निकल गया। तीसरी बार टी.टी. फिर आया बोला भाई तुमने सब जगह देख लिया, बैग खोल के, सूटकेस खोलकर एक-एक कपड़ा झाड़कर देख लिया

ऐसा तो नहीं तुमने टिकट लिया ही ना हो। यात्री बोला टिकट तो मैंने लिया है टिकट नं. १००७ लिया है। ना जाने कहाँ गुम गया। टी.टी. बोला तुमने सब पॉकेट देख ली, क्या तुम्हारी बनियान में भी जेब है, यात्री बोला हाँ है टी.टी. बोला तो इसको क्यों नहीं देखा। यात्री बोला देखो भईया! अब सिर्फ और सिर्फ एक ही उम्मीद है कि टिकट वहीं रखा है किन्तु यदि वहाँ नहीं मिला तो फिर कहाँ देखूँगा। जहाँ रखा है वहाँ नहीं देखता है, बाकी सब जगह देखता है। अब यदि सब जगह देख भी ले तो मिलेगा कहाँ से? हम लोग भी तो प्रायः करके ऐसा ही तो करते हैं। जहाँ पर सुख और शांति है वहाँ पर तो कभी देखने का प्रयास किया ही नहीं यदि वहाँ देखने का एक बार भी प्रयास किया होता तो जीवन में अशांति की दशा नहीं होती। एक साथ घना अंधकार और सूर्य का प्रचंड प्रकाश दृष्टिगोचर नहीं होता। यदि सूर्य का प्रचंड प्रकाश है तो घना अंधकार नहीं और जहाँ घना अंधकार है वहाँ सूर्य का प्रचंड प्रकाश नहीं। दोनों एक साथ कैसे मिलेंगे? जहाँ शांति है वहाँ और कुछ नहीं। जहाँ और कुछ है वहाँ शांति नहीं। वैदिक परम्परा वाले बताते हैं।

''जिसने सूरज चाँद बनाया, धरती और आकाश बनाया।
जिसने हमको जन्म दिया है, पालपोसकर बड़ा किया है।

ये सब मानते हैं भगवान ने हमको बड़ा किया सूरज, चाँद बनाये प्रकृति की संरचना की। परमात्मा जो चाहे सो कर सकता है ऐसा वे मानते हैं।

एक क्षण के लिए हम भी मान लें जिस परमात्मा ने रेवाड़ी को बनाया, तुमको बनाया, तुम्हारी family बनायी वह परमात्मा कुछ समय पहले रेवाड़ी में बाजू वाले कोने पर रहता था। परमात्मा भी परेशान हो गया, दिन में सैकड़ों बार लोग जायें,परमात्मा धूप दिखाओ। दूसरा कहता नहीं, पानी बरसना चाहिए, वरना मेरा खेत सूख जाएगा। तीसरा कहता है ठंडी हवा चले, चौथा कहता है कि ठंडी ना पड़े। परमात्मा परेशान इतने लोग उसके पास जायें, परमात्मा को तो बड़ी मुश्किल हो गई। क्या करें, एक कहता है कड़ाके की धूप करो, एक कहता है पानी बरसाओ, परमात्मा ने कहा भाई

मैंने तो झंझट मोल ले ली जो तुम लोगों को बना दिया, नहीं बनाता तो अच्छा रहता।

''दुनिया बनाने वाले, क्या तेरे मन में समायी''

वो दुनिया बनाने वाला वैदिक परम्परा का जो भगवान है वह बड़ा परेशान हो गया, सोचने लगा कि जीवन में सबसे बड़ी गलती यही की, मैंने दुनिया बना दी, क्या करना चाहिए? वह परमात्मा एक दिगम्बर साधु के पास गया महाराज! अब आप ही मेरे प्राण बचा सकते हो, दिगम्बर साधु ने उनकी परेशानी को सुना, और तुरन्त कान में एक मंत्र फूँक दिया और ऐसा मंत्र फूँका कि वह परमात्मा ऐसी जगह जाकर के बैठा है, आज तक उसके पास कोई शिकायत करने नहीं गया। आप सोच रहे होंगे कहाँ पहुँच गया, समुद्र में इंसान है, समुद्र के तल तक घूम कर आ जायेगा, वह पहाड़ की चोटी ना छोड़ेगा, जंगल में घने से घने जंगल हों, निर्जन स्थान पर भी वह इंसान पहुँच जायेगा यह काले सिर वाले के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है वह सब जगह पहुँच जाता है। किन्तु एक जगह ऐसी है जहाँ नहीं पहुँच पाता, आज तक वहाँ पर कोई भी व्यक्ति शिकायत लेकर के नहीं गया और जो शिकायत लेकर गया वह वहाँ तक पहुँच ही नहीं पाया है कहाँ है वह स्थान सिद्धालय? नहीं वहाँ तो अनन्तानन्त निगोदिया जीव भरे पड़े हैं तो और कौन-सी जगह है अरिहंत भगवान के समवशरण में नहीं। मुनि महाराज ने उनके कान में मंत्र पढ़ दिया था बस तू इंसान की आत्मा के बीच में छिप कर बैठ जा उसकी आत्मा के प्रदेशों में बस जा जब भी कोई मुनि, त्यागी व्रती ध्यान में लीन होगा, एक विकल्प भी शेष होगा तो आत्मा में नहीं जा सकता, आत्मा में पहुँच गया तो कोई विकल्प वहाँ पहुँच नहीं सकता। दो में एक चीज जायेगी या तो विकल्प या आत्मा उसका उपयोग, कहा जाता है तब से परमात्मा बहुत सुखी है। उसके पास शिकायत लेकर कोई पहुँचा ही नहीं तो शांति तो वास्तव में है। यदि वही तुम सब लोग शांति चाहते हो तो मुझे तो नहीं लगता यदि सभी को एक कागज-पैन दे दिया जाये और कह दिया जाये

कि इस कागज पर एक इच्छा लिखो सबकी इच्छायें वैसी ही लिखी जायेंगी जैसी एक महात्मा जी ने लिखवाई थीं। एक गुरु और चेला थे चले जा रहे थे उस गुरु की बहुत ख्याति थी कि वे बहुत पहुँचे हुए महात्मा हैं। इन्हें ऋद्धियाँ सिद्ध हैं जिसको जैसा कह दें उसको वैसी प्राप्ति हो जाती है, नगर के लोगों ने बहुत आग्रह किया रोका, प्रार्थना की, महाराज धर्म का उपदेश दीजिए किन्तु गुरु ने उपदेश नहीं दिया, दूसरे गाँव में पहुँचे वहाँ भी नहीं दिया, तीसरे गाँव में पहुँचे वहाँ भी नहीं दिया। चेला को थोड़ा खराब लगा उसने सोचा गुरु कैसे हैं? इन्होंने दीक्षा ली, सन्यास लिया अपने और पर के कल्याण के लिए चार शब्द उन्हें सुना देते तो क्या हो जाता, कितनी तीव्र भावना थी लोगों की, कितनी तीव्र प्यास थी लोगों की। गुरु ने कुछ नहीं कहा मौन लेकर चले गये। जब आश्रम पर पहुँचे तो शिष्य से नहीं रहा गया उसने कहा- गुरुदेव, क्षमा करें मुझे एक बात समझ नहीं आयी, आप से नगर के लोग इतनी प्रार्थना कर रहे थे उपदेश देने के लिए किन्तु आपने कुछ भी नहीं कहा- क्या हुआ? गुरु ने कहा वत्स! मुझे उनमें से कोई भी व्यक्ति उपदेश सुनने वाला नहीं लगा अरे महाराज! इतने सारे सैकड़ों लोग उपदेश सुनना चाहते थे, नहीं वत्स ये तुम्हारी भूल है इन्सान भ्रम में जीता है, भूल में जीता है, होता कुछ और है दिखता कुछ और है, ऐसे कैसे? यदि यह पंखा चालू कर दिया जाये तब तुम्हें क्या दिखेगा? एक सर्किल, तीन पांखुड़ी दिखाई देंगी क्या? जो है वह दिखाई नहीं देता जो नहीं है वह दिखता है।यदि कोई आग लगी लकड़ी को घुमाये तो ऐसा लगेगा जैसे आग का ही गोल सर्किल हो, लकड़ी दिखाई नहीं देगी यही संसार की रीति है। जो है वह दिखता नहीं जो नहीं है वह दिखता है जैसे दर्पण में मुख और संसार में सुख दिखता है पर है नहीं, इसी को कहते हैं मृग मरीचिका,illusion इसे कहते हैं भ्रम, इसे कहते हैं वहम, इसे कहते हैं मिथ्यात्व, शिष्य ने कहा- गुरुदेव आपका कहना ठीक है, पर किस-किस ने नहीं कहा आपके उपदेश सुनने के लिए। गुरुदेव ने कहा ठीक है- एक काम करो, उन्होंने अपने सभी १००-२००-५०० शिष्यों को बुलाया और कहा-

एक-एक रजिस्टर लेकर जाओ, रास्ते में जितने भी गाँव पड़ें उन सभी में जाना, एक-एक घर में जाकर सभी सदस्यों के नाम पूछकर लिस्ट बनाना उन सभी से पूछना तुम सबको क्या-क्या चाहिये हमारे गुरुदेव को बहुत बड़ी सिद्धि हो गयी है जो कुछ भी आपको चाहिए वह सब आपको प्राप्त होगा, वे सभी शिष्य गये और घर-घर जाकर उन्होंने सब की इच्छायें लिखीं, कोई पक्का मकान चाहता था, कोई बैंक बैलेंस चाहता था कोई नौकर-चाकर चाहता, कोई गाड़ी बंगला, कोई ऊँचा पद चाहते सब ने अपनी अलग-अलग इच्छायें लिखीं, १०-२० गाड़ियाँ रजिस्टरों से भरकर संत के पास आईं, शिष्यों से कहा अब इन्हें पढ़ो, सुनकर के आपको ताज्जुब होगा इतने सभी रजिस्टर पढ़ लिये, उनमें से किसी में भी एक जगह भी नहीं लिखा था कि मैं अपने गुरुदेव के धर्मोपदेश के शब्द सुनना चाहता हूँ।हर व्यक्ति ऊँचा मकान, मीठे पकवान, नौकर-चाकर चाहता है। शांति तो कोई व्यक्ति चाहता ही नहीं है, जब चाहते ही नहीं हो तो दुकानदार पागल है क्या? दुकानदार के सामने तुम खड़े हो जाओ और कहो शक्कर चाहिए तो वह तुम्हें घी कैसे देगा, तुम जो मांगोगे वही तो तुम्हें मिलेगा। तो पहली बात तो ये है हमने अभी तक शांति चाही ही नहीं यदि अन्तरात्मा से चाही होती तो अभी तक शांति मिल गयी होती, दूसरी बात शांति तब मिलती है जब केवल शांति और शांति ही चाहते हैं वह शांति अपने साथ सौत को पसंद नहीं करती किसी भी कीमत पर। शांति तो तीर्थंकर की तरह से इकलौती है, तीर्थंकर के माता-पिता सिर्फ एक संतान को जन्म देते हैं उनके कोई भाई नहीं होता, कोई बहिन नहीं होती, ऐसे ही शांति इकलौती है, वह अपने साथ सहोदर को स्वीकार नहीं करती है, शांति एक ऐसी मुक्ति सुन्दरी है जिसने जीवन में कभी सौत को स्वीकार नहीं किया, केवल ज्ञान के साथ में दूसरा और कोई ज्ञान टिक नहीं सकता, और ज्ञान टिके हैं तब तक केवल ज्ञान टिक नहीं सकता, केवलज्ञान हो नहीं सकता, यह उसकी स्थिति है पहली तो ये हुई और दूसरी यह कि वह शांति सिर्फ शांति चाहती है और दूसरी चीज नहीं चाहती, किन्तु आपको तो और

दूसरी भी चीज चाहिए न, यदि आप कहीं गये और पानी भी नहीं मिला तो आप कहेंगे- लो उन्होंने तो पानी तक की नहीं पूछी। यदि पीने को मिला तो कहेंगे तो अकेला पानी पीया जाता है क्या? दो बर्फी रख देते साथ में, और बर्फी मिली, तो नमकीन नहीं है क्या घर में, नमकीन भी आ गई। अरे चाय तो ले आता दो कप, और चाय भी पिला दी तो अरे इतनी गरीबी आ गई दो रोटी खिला देता तो क्या बिगड़ जाता, दो रोटी भी मिल गयीं तो उसकी इच्छायें, मान, सम्मान की आकांक्षायें बढ़ती जाती हैं, एक से काम चलता ही नहीं, कभी व्यक्ति एक इच्छा के साथ जी ही नहीं सकता, उसे एक साथ कई इच्छायें लेकर चलनी पड़ती हैं। मैं आपको practically एक बात बताता हूँ वह सही है। हम आपसे पूछें अभी आप क्या सोच रहे हो? तो एक बात कहोगे मैं आपके अंदर की बात कहता हूँ जिस समय तुम एक जगह मन लगाकर काम कर रहे हो उस समय तुम्हारे अवचेतन मन में कई विचार चल रहे हैं। अभी भी आप मेरी बात तो सुन रहे हैं, किन्तु ये भूल रहे हैं पीछे और भी सारी बातें चल रही हैं, ये बिल्कुल सत्य बात है ये संसारी प्राणी है ये संसारी प्राणी एक स्त्री को प्राप्त करके भी दूसरी पर निगाह रखता है ऐसे ही एक इच्छा को प्राप्त करके दूसरी इच्छा को प्राप्त करना चाहता है, उसे ऐसे समाप्त नहीं किया जा सकता, एक को प्राप्त करना चाहते हो तो ऐसे नहीं। एक दूसरे प्रकार का उदाहरण आपको दे रहा हूँ किन्तु उसका दूसरा अर्थ नहीं लगा लेना उससे गलत अर्थ ग्रहण नहीं करना तथ्य ग्रहण करना, समझना मैं क्या कहना चाहता हूँ- कॉलेज में लड़के-लड़की साथ-साथ पढ़ते हैं, संयोग की बात एक मनचले लड़के की दृष्टि एक लड़की पर पड़ गयी, वह लड़की बहुत सुन्दर थी, एक दिन लड़के ने उसका रास्ता रोका और कहा मैं तुझे बहुत चाहता हूँ, लड़की कुछ नहीं बोली मौनपूर्वक चली गई, लड़के ने दूसरी बार फिर रोका, लड़की ने कुछ कहना चाहा उसके पहले ही वह अपने मन की बात उगल गया बोला बस मेरी दृष्टि में संसार में तुझसे सुन्दर कोई स्त्री है ही नहीं, तू नहीं मिली तो प्राण दे दूँगा और भी जो कुछ कहना था सो सब कह दिया, वह सब

जो युवा मूर्खचन्द्र कहते हैं जब उसकी बात पूरी हो गई तब लड़की बोली देखो ऐसे चाहने से कुछ नहीं होता है समर्पण भी कोई चीज होती है और जिसका जिसके प्रति समर्पण होता है उसे वह चीज मिल जाती है। लड़का कहता है मैं तेरे लिए प्राण देने के लिए तैयार हूँ, मरने को तैयार हूँ लड़की ने कहा मुझे मरने वाला न चाहिए मुझे तो जीने वाला चाहिए। लड़की ने कहा पूर्ण समर्पित हो, लड़के ने कहा संसार में तुम्हारे सिवाय ऐसा कोई नहीं जिसके लिए मैं प्राणपन से समर्पित हूँ, लड़की ने कहा कि तुमने थोड़ी जल्दबाजी कर दी। बोला क्यों? वह बोली तुमने मेरी छोटी बहिन को नहीं देखा, एक बार तुम उसको देख लेते वह बहुत सुन्दर है अगर मिले होते तो पागल हो गये होते और चर्चा करते-करते तुरन्त बोली अरे लो पीछे-पीछे आ रही है उस लड़के ने जैसे ही निगाह पीछे की, लड़की ने एक तमाचा मारा कहा बत्तमीज समर्पण इसे कहते हैं यदि तेरा समर्पण मेरे प्रति था तो फिर अभी तेरी निगाह पीछे क्यों गई यदि पीछे की ओर दृष्टि गई तो तेरा समर्पण मेरे प्रति नहीं है। जिसका समर्पण जिसके प्रति होता है उसके लिए और तो सब बेकार है। बुन्देल खण्ड में एक कहावत "मन लगा गधी से तो परी क्या चीज है"। समर्पण वह कहलाता है जिसके लिए उससे बढ़कर और कोई न हो। महानुभाव! तो दो इच्छायें एक साथ नहीं चल सकतीं। एक महात्मा के पास एक बहुत धनी सेठ गया कहने लगा महात्मा जी मैं दर-दर भटक कर के आ गया किन्तु मुझे शान्ति नहीं मिली, महात्मा जी ने कहा कि यदि शान्ति दर-दर भटकने से मिल जाती तो आज तक जो लोग दर-दर भटके थे उन्हें शांति मिल गई होती किन्तु उन्हें स्वयं शांति नहीं मिली तो उनके दर पर तुम्हें शांति कैसे मिल जायेगी? महात्मा जी आपने बिल्कुल ठीक कहा, मुझे भी शांति नहीं मिली अब बताओ मुझे शांति कैसे मिलेगी? महात्मा जी ने कहा अब तुम्हें दर-दर भटकने की आवश्यकता नहीं तुम्हारे पास बहुत शांति है।सिर्फ और सिर्फ शांति को चाहो तो वह तुम्हें मिल जायेगी। महात्मा जी बोले कि सेठ जी आप अकेले शांति को नहीं चाहते आप तो शांति के

साथ-साथ यह भी चाहते हो कि व्यापार में घाटा न लग जाये आपके साथ आपके बाल-बच्चे आपकी आज्ञा में रहें आप यह भी चाहते हो कि आपकी पत्नी आपको चाहती रहे आप यह भी चाहते हो आपका शरीर भी स्वस्थ रहे। हाँ सो तो है जब ये तो यह है तब अकेले शांति कहाँ चाह रहे हो इन सबके साथ जीना चाहते हो तो शांति कहाँ से आयेगी। महात्मा जी इससे क्या फर्क पड़ता है, फर्क यह पड़ता है कि शांति प्राप्ति की इच्छा तीव्रता से युक्त नहीं हो सकती, एक संकल्प होता है तो सुदृढ़ होता है। दो संकल्प लेकर चलोगे तो एक भी पूरा नहीं हो पाता है नहीं महात्मा जी ऐसी कोई बात नहीं है। हम एक साथ चार-चार काम कर लेते हैं हाँ सेठ जी संसार के और काम तो एक साथ हो सकते हैं। किन्तु ये काम नहीं हो सकता शांति पाने के लिए वह तलवार चाहिए जो तलवार को काट सके, अपनी ही आँखों से अपने को देख सको, अपने ही कंधों पर खड़े हो सको। सेठ की समझ में अब भी नहीं आया, महात्मा जी ने कहा कि चल मैं तुझे प्रयोग करके बताता हूँ, महात्मा एक मटका लेकर एक नदी के किनारे पहुँचा कपड़े उतारे और नदी में उतरा नहाने के लिए और मटका भरकर नदी के किनारे रख दिया, महात्मा ने कहा कि आज तू भी मेरे साथ स्नान कर ले, सेठ बोला नहीं-नहीं, मुझे डर लगता है महात्मा ने कहा डरने जैसी कोई बात नहीं है कोई ज्यादा गहरा पानी नहीं है। सेठ भी उतर गया पानी में, महात्मा ने उसका हाथ पकड़ा और खींच लिया महात्मा अच्छा मस्त था उसने सेठ की पकड़ी गर्दन और पानी में डुबा दिया वह सेठ झटपटाने लगा सोचने लगा महात्मा है कि हत्यारा है भगवान कैसे इससे छूटूँ? उसने पूरी शक्ति लगाई और बाहर निकल आया महात्मा ने पूछा भाई क्या बात है? बात क्या तुम तो हत्यारे हो मैं तो तुम्हें महात्मा समझता था, तुम तो मेरे प्राण लेने पर तुले हो, अच्छा एक बात बताओ जब मैंने तुम्हारी गर्दन पकड़कर पानी में पूरी डुबा दी थी तो गर्दन छुड़ाकर पानी से छूटना चाहता था, सही-सही बताना उस वक्त तू भगवान से क्या माँग रहा था? स्त्री मेरी आज्ञाकारी हो या पुत्र आज्ञाकारी हों, मुझे रोग न हो, व्यापार में घाटा न लगे

क्या माँग रहा था, वह बोला एक ही बात सोच रहा था कि हे भगवान् ! इस व्यक्ति से मुझे छुड़ा ले। एक ही बात माँग रहा था, ऐसी ही तीव्र लालसा मन में जब शांति को प्राप्त करने की होगी तब कोई तुझे शांति से वंचित नहीं कर सकता। महानुभाव! शांति दो के स्थान पर अकेली ही चलती है। जो जितनी अच्छी चीज होती है वह अकेली ही रहती है। सूर्य कभी अपने वैभव को साथ लेकर नहीं चलता चन्द्रमा अकेला ही चलता है, शेर अकेला ही चलता है, शांति संसार की अन्य चीजों को साथ लेकर नहीं चलती है। महानुभाव! शांति क्यों नहीं मिल रही, आज का टॉपिक कितने शब्द का है तीन I Want Peace आप चाहते क्या हैं? पीस। उसके पहले क्या है वान्ट और इसके पहले i यानि मैं अब ये सोचो आप यहाँ इस हाल में बैठे हो और आपको बाहर Road पर जाना है पहले आप को हॉल फिर बाहर का आँगन Cross करना पड़ेगा न। दरअसल में ये व्यक्ति "i" के इर्द-गिर्द घूमता रहता है। मैं जैन, मैं अध्यक्ष, मैं मंत्री, मैं सेठ,मैं ये,मैं वो, बस मैं-मैं ये मैं एक ऐसी चीज है जो व्यक्ति को आगे नहीं बढ़ने देती। मैं की बेड़ी इतनी जबरदस्त बेड़ी है कि इसको तोड़ना बड़ा कठिन है, लोहे की सांकलों को तोड़ा जा सकता है मैं की बेड़ी को नहीं तोड़ा जा सकता, जब तक तुम, मैं की बेड़ी से जकड़े रहोगे तब तक तुम्हें मुक्त आकाश के दर्शन न हो सकेंगे। मैं की बेड़ी में जकड़ा व्यक्ति वॉन्ट की इच्छा की जेल में कैद है उसे शांति के दर्शन कैसे हो सकेंगे।

व्यक्ति बस यही कहता है मैं ये हूँ वो हूँ तू जानता नहीं मैं कौन हूँ तो अगला कोई कह ही देता है हाँ हाँ हमें पता है तू कौन है, पर शायद तुझे नहीं पता कि तू कौन है।

एक वृद्ध पुरुष यात्रा करने के लिए चढ़ा उसके पास अंगूरों की पोटली थी, एक युवा लड़का आया और अंगूरों की पोटली पर बैठ गया, बाबा ने कहा बेटा उठो यहाँ से वह बोला- बाबा जानता नहीं मैं कौन हूँ बेचारा बूढ़ा व्यक्ति शांत हो गया, थोड़ी देर बाद कुछ कहने का प्रयास किया, वह

फिर अकड़ कर बोला जानते नहीं मैं कौन हूँ, तीसरी बार पुनः यही कहा, बुड्ढे व्यक्ति ने कहा हाँ जानता हूँ तेरे सिर पर यौवन का उन्माद, भूत चढ़ा है, तू पागल है मूर्ख है तू मेरी अंगूरों की पोटली पर बैठ गया है। तुझे इतना नहीं दिखाई देता है, कोई आकर तुझे दो थप्पड़ मार देगा रोता फिरेगा तुझे मालूम पड़ जायेगा तू कौन है, यह मैं सबसे बड़ा अहंकार है।

देहोऽहं, कर्मरूपोऽहं मनुष्योऽहं कृशोऽकृशा ।
गौरोऽहं श्यामवर्णोऽहमद्विजोऽहं द्विजोऽयता ।।
अविद्वानप्यहं विद्वान् निर्धनो धनवानहम् ।
इत्यादि चिन्तनं पुंसामहंकारो निरुच्यते ।।

मैं देहरूप हूँ, कर्मरूप हूँ, मनुष्य हूँ, दुर्बल हूँ, स्थूल हूँ, गौरवर्ण हूँ, श्याम वर्ण हूँ, द्विजोतर हूँ, द्विज हूँ, अविद्वान हूँ, विद्वान हूँ, निर्धन हूँ और धनवान् हूँ, इस प्रकार पुरुषों का चिंतन अहंकार कहलाता है।

इंग्लैण्ड की रानी विक्टोरिया किसी कार्यक्रम में से रात को देर से लौंटी, उनके श्रीमान् जी महल में थे उन्होंने आवाज लगाई दरवाजा खोलो, श्रीमान् जी को थोड़ा अच्छा नहीं लगा कि देखो ये मुझे सीधे आवेश में बात कर रही है पूछा कौन? बोली इंग्लैण्ड की रानी विक्टोरिया, वह दरवाजे तक गया और आकर पुनः लौट गया और सो गया खड़ी रह बाहर, इंग्लैण्ड की महारानी है न मुझे न चाहिए, दोबारा दरवाजा बजाकर बोली आपकी पत्नी फिर वह गया लगा थोड़ा अहंकार कम हो गया है, मैं आपकी अर्धांगिनी हूँ समझे! वह बोला अच्छा अभी भी अधिकार की बात कर रही हैं मैं नहीं खोलूँगा, बेचारी घंटे-दो घंटे खड़ी रही फिर कहती है मैं आपके चरणों की दासी चरणों की धूल हूँ, उसने तुरंत दरवाजा खोल दिया।

महानुभाव! अहंकार भी किसका करना-

जो रहा किसी दिन बादशाह, वह पथ का आज भिखारी है।
जो रोटी को मुहताज रहा, वह बना राज दरबारी है।।

अहंकार के साथ व्यक्ति कुछ भी ग्रहण नहीं कर सकता।अर्थ यह है कि अहंकार के पर्वत पर चढ़े रहकर के कोई भी व्यक्ति जमीन पर पड़े हुए शक्कर के दाने नहीं उठा सकता, हाथी ने कभी शक्कर के दाने उठाये, यदि तुम्हें कुछ चाहिए तो जो तल में पड़े हैं समुद्र के किनारे घूमने से समुद्र के भीतर पड़े रत्नों को प्राप्त नहीं किया जा सकता, उसके लिए तो उसको डुबकी लगानी पड़ती है अंदर तक जाना पड़ेगा। कोई व्यक्ति सिर्फ सतह पर तैर रहा है वह सिर्फ तैरता ही रहेगा वह भीतर डुबकी लगाता नहीं दिखाई देगा, और डुबकी नहीं लगायेगा तो मोती पकड़ में नहीं आ पायेंगे। तो महानुभाव! कहने का आशय यह है कि हम भी ऊपर ही ऊपर जाते हैं हमारे अंदर भी एक सागर है, रत्नों का सागर है हम रत्नों के किनारे-किनारे चक्कर लगा रहे हैं। और किनोर-किनोर दौड़ लगाने से भी तुम्हारी मुट्ठी में कोई रत्न नहीं आ पायेगा। जब रत्न हमारी मुट्ठी में आ जायेंगें तब हम दुनिया की दृष्टि से ओझल हो जायेंगे, अदृश्य हो जायेंगे, अगोचर हो जायेंगे तो महानुभाव! पहली शर्त समझनी है कि अहंकार के पर्वत पर खड़े होकर हम अपनी आत्मा के किसी भी गुण को, वैभव को प्राप्त नहीं कर सकते, आज नहीं तो कल नीचे उतरना ही पड़ेगा। अहंकार कभी किसी को आगे नहीं बढ़ने देता। मैं-मैं बकरी करती है तो क्या पाती है-

बकरी मैं-मैं करत है अपनी खाल खिंचाय।
और तू ती तू तू करत , रही मजे से गाय।।

तो जो व्यक्ति मैं-मैं करता है ताको कौन हवाल? बकरी मैं-मैं करती है और जब तांत बनती है रूई धोने में आवाज आती है तुई है-तुई है- जो इंसान मैं-मैं करता है वह आज नहीं तो कल पतन को प्राप्त करता है, "मैं" पतन का बीज है जिसके भी मन में आ गया चाहे रावण के, चाहे कंस के, चाहे दुर्योधन के उसकी मैं टिकी नहीं, नष्ट हो गई, इस में को छोड़ कर के मय हो जाओ। चेतनामय, चिन्मय, चित्मय हो जाओ। जब स्वयंमय हो जाओगे तब निःसंदेह तुम से तुम्हारी शांति को कोई छीन नहीं सकता। संक्षेप

में दूसरी बात है (चाहना, इच्छा) यदि तुमने वैभव छोड़ दिया और मन में कोई इच्छा शेष रही, तो फिर तुम बाहर(रोड पर) नहीं पहुँच सकते। मैं के दरवाजे को खोलकर बाहर पहुँच गये तो मैं को छोड़ने वाले व्यक्ति भी मन में कोई इच्छा रखते हैं साधु संत भी जब व्यवहार धर्म का पालन करते हैं, सविकल्प अवस्था में रहते हैं तब वे भी इच्छा रखते हैं और जब निश्चय में जाते हैं तब 'निरवांछ तपै शिव पदनिहार' जब शिव पद की भी इच्छा नहीं होगी तभी शिवपद की प्राप्ति होगी।

चाह गयी, चिंता गयी मनवा बेपरवाह ।
जिनको कछु न चहिये वे शाहन के शाह ।।

लोक में जिस व्यक्ति की इच्छा जितनी कम होती जाती है वह उतना ही गुरु यानि गुणों में भारी होता चला जाता है। प्रश्नोत्तर रत्नमालिका में आचार्य अमोघवर्ष स्वामी कहते है 'एव किं लाघवं याञ्चा' जो व्यक्ति याचना करता है वह लघु है ! जो ग्रहण करता है वह समुद्र की तरह से नीचा हो जाता है और त्याग करने वाला मेघ के समान ऊँचा उठता चला जाता है।और कहा भी है-

''स्थितिरूच्चै : पयोदानां पयोधीनामध : पुनः''
देहीति वचनं श्रुत्वा देहस्था : पंचदेवता : ।
नश्यन्ति तत्क्षणादेव श्री - ह्री-धी-धृति-कीर्तय : ।।

देहि - देओ' यह वचन सुनकर शरीर में रहने वाली श्री,ह्री, धी, धृति व कीर्ति नामक पाँच देवियाँ चली जाती हैं। कहने का आशय यह है कि याचना करने से मनुष्य की शोभा, लज्जा, बुद्धि, धैर्य और कीर्ति नष्ट हो जाती है।तो जो व्यक्ति किसी से कुछ नहीं चाहता वह ही वास्तव में गुरु है, गुणों से युक्त है।

तावद् गुणा गुरुत्वञ्च, यावन्नार्थयते पुमान् ।
अर्थी चेत् पुरुषो जातः, क्व गुणा : क्व च गौरवं ।।

"व्यक्ति में गुण और गुरुत्व तभी तक रहते है जब तक पुरुष किसी से कुछ चाहता नहीं । वरना इच्छाओं से युक्त पुरुष के गुण और गुरुत्व है कहाँ?" अरे ! चाहने से कुछ नहीं मिलेगा ।

'मोक्ष चाहने से मोक्ष नहीं मिलेगा, हमारे चाहने मात्र से हम निर्विकल्प न हो सकेंगे उसके लिए एक ही स्थिति है विकल्पों को छोड़ दो, निर्विकल्पों का भी विकल्प छोड़ दो।

तुम लोग हो जिंदगी भर शांति के लिए अशांत रहते हो, सुख पाने के लिए दुःखी रहते हो, विकल्पों को शांत करने के लिये विकल्पों में झूलते रहते हो, और एक हाथ से खाने के लिए जिंदगी भर दोनों हाथों से कमाते रहते हो, तुमसे अच्छे तो हम हैं एक हाथ से आशीर्वाद दिया और दोनों हाथों से खाते है।महानुभाव,कहने का अभिप्राय ये है कि जब तक इच्छा मन में शेष रहेगी वह चीज प्राप्त न हो सकेगी जिसको कि तुम प्राप्त करना चाहते हो। शांति कभी भी मांगने से नहीं मिलती शांति तो स्वतःप्राप्त होती है, वह मिल जायेगी, किसी चिकित्सक के पास जाकर अपने मुँह का दाँत माँगों चाहे 100 रुपये दो चाहे 1000 तो डाक्टर क्या कहेगा भईया तेरे मुँह का दाँत मेरे पास कहाँ से आया? जो तेरे पास है वह मैं तुझे कभी दे नहीं सकता ऐसे ही इस संसार में हम भिखारी की तरह घूम रहे हैं शांति मांग रहे हैं जो कि हमारे पास है।

एक सेठ शांति की तलाश में महात्मा के पास पहुँचा महात्मा ने कहा मेरे पास उपाय है एक महात्मा और है उस महात्मा को तुम सीदा दे आओ (आटा), सेठ कंजूस था सोचने लगा लो आते ही खर्चा बता दिया, वह चुटकी भर आटा लेकर गया उन महात्मा के पास, बोला महात्मा जी मैं आपको सीदा देने आया हूँ, बोला वापस कर दो क्यों? क्योंकि आज का तो हमारे पास है, बोला कल के लिए, कल जब आयेगा तब देखेंगे, कल जीवित रहेंगे या मरेंगे। आज के लिए कल की चिंता क्यों? सेठ ने कहा ये तो बड़ा ऊँचा महात्मा है, इसके पास अवश्य मेरी शंका का समाधान मिल जायेगा, उसने कहा महात्मा जी आपसे कुछ पूछना चाहता हूँ- मैं शांति चाहता हूँ उसकी खोज में भटक रहा हूँ। उन्होंने कहा इस समुद्र में एक मकरेश्वर नाम के महात्मा जी हैं, मगर के रूप में रहते हैं जब बुलाओ तो आते हैं महात्मा उसके साथ गया, बोला हे मकरेश्वर महाराज पधारो आप! दो-चार आवाज लगाईं मगर मुख ऊपर

करता हुआ बाहर आया, किनारे तक पहुँचा कहा मुझे आत्म शांति चाहिए, मकरेश्वर ने कहा मेरा गला सूख रहा है मेरे प्राण कंठ में अटके हुए हैं तू कहीं से मेरे लिए एक गिलास पानी ले आ, तो मैं कुछ बोल दूँ, वह सेठ बोला धिक्कार! कितना मूर्ख है ये, एक गिलास पानी मुझसे माँग रहा है जब कि स्वयं अथाह समुद्र में डूबा हुआ है मकरेश्वर ने कहा इतनी बुद्धि तेरे पास है तो तू मेरे पास क्यों आया? तेरे पास भी तो अथाह शांति है, तेरी आत्मा में भी तो अथाह शांति का भण्डार भरा पड़ा हुआ है और तू मुझसे शांति माँगने आया है।

महानुभाव! सत्यता तो यही है कि शांति हमारे अंतरंग में है वह चाहने से नहीं मिलेगी, शांति को खोजो मत, शांति को पाने के लिए अपने अंदर खोदो, खोजो-खोजो जो तुम्हारे पास है शांति को पाने के लिए सब कुछ खो दो, और अंतरंग में खोजो। जो चट्टान अंतरंग में तुम्हारी आत्मा पर विकल्पों की चढ़ी हुई है उन्हें खोजो खोदकर फैंकते जाओ तब शांति मिलेगी। एक महिला थाली में रखकर गेहूँ बीन रही है कंकर-पत्थर भी पड़े हुए हैं। तो क्या करती है सब चीज फेंकती जाती है केवल वह चीज उठा लेती है जो उसे चाहिए, ऐसे ही फालतू-फालतू चीज को फेंकते जाओ और जो चीज बचेगी वह शांति कहलायेगी।

ऐसी शांति आप सभी को प्राप्त हो मैं आप सभी के प्रति ऐसी मंगल भावना भाता हूँ। इसी मंगल भावना के साथ आप सभी लोगों को बहुत-बहुत आशीर्वाद।

"शांतिनाथ भगवान की जय"

घर को स्वर्ग कैसे बनायें

उपस्थित सभी धर्मस्नेही, भव्यवर पुण्डरीक सत्श्रद्धालु महानुभाव।

आज का विषय जो आप सुनना चाह रहे हैं अपने घर को स्वर्ग कैसे बनायें? घर को स्वर्ग बनाने के लिए कुछ करना पड़ता है और खोने के लिए कुछ नहीं करना पड़ता। खोना एक नैसर्गिक क्रिया है और बनाना पुरुषार्थगम्य है। जब भी कोई चीज बनायी जाती है उसके लिए मेहनत करनी पड़ती है, किसी नगर में एक बहुत पुरानी धर्मशाला थी। चातुर्मास में उसमें पानी चूता था। उसकी छत इतनी नीची थी कि यदि कोई लम्बा आदमी आ जाए तो उसका सिर छत से टकराता था। दरवाजे भी बहुत छोटे-छोटे थे। आवश्यकता से अधिक उसमें खम्भे थे। नीचे का फर्श ऐसा था कि व्यक्ति सावधानी से चले तो भी ठोकर खाकर गिर जाए। उस धर्मशाला से लाभ कम और हानि ज्यादा थी। गाँव के लोगों ने मीटिंग बुलाई कि अब तो इस धर्मशाला को तोड़कर नई धर्मशाला बनानी चाहिए। जब मीटिंग में यह प्रस्ताव रखा तो कुछ लोग खड़े हो गए, बोले कोई हाथ तो लगा के देखे हम इस धर्मशाला को नहीं तोड़ने देंगे। यह हमारी पूर्वजों की बनाई धर्मशाला है। किसी का इतना साहस नहीं जो इसे तोड़ दे। धर्मशाला बनानी है तो दूसरी नयी बनाओ या इसके ऊपर बनाओ लोगों ने बहुत समझाने का प्रयास किया कहा भाई देखो ये पुरानी है इसको तोड़ देना ही ठीक है।

परन्तु लोग फिर खड़े हो गये बोले अगर बनाना चाहते हो तो इसके ऊपर बना दो। लोगों ने पुनः समझाने का प्रयास किया कि जब नींव कमजोर है तो ऊपर बनाने पर भी वह टूट जायेगा। सब बेकार जायेगा। कुछ लोगों ने फिर कहा यदि तोड़कर ही बनाना चाहते हो तो कुछ चीजें जैसे पाषाण की देहरी, नक्काशी वाला पत्थर और भी कई चीजें हैं उन्हें, ज्यों का त्यों ही लगाना पड़ेगा। पहले लिखित प्रस्ताव में यह लिखो तब हम तोड़ने की स्वीकृति देते हैं। फिर समझाने का प्रयास किया कि देखो नई धर्मशाला में पुरानी चीज ही ज्यों की त्यों लगा दी तो नई धर्मशाला बनाने का औचित्य ही क्या रहा? फिर वह पुरानी चीजों से नई चीज भी पुरानी ही कहलायेगी। यदि कोई व्यक्ति पुरानी खाट से नई खाट बना दे तो खाट नयी हो गई क्या?वह पुरानी ही है जैसे ही कोई बैठेगा टूट जायेगी। यदि कोई पुरानी सड़ी-गली लकड़ी की कुर्सी बनवाना चाहे, किवाड़ बनवाना चाहे तो क्या वे टिकेंगे। एक बार धक्के से टूट जायेंगे यदि नई चीज बनानी है तो नया सामान भी लाना होगा। किन्तु बहुत कम लोग ऐसे थे जो तैयार थे कि पुरानी धर्मशाला की एक-एक ईंट यहाँ तक कि नींव तक की ईंट निकालकर बाहर फैंक देना चाहिए और नया आसाम बनाकर के पुनः बनाना चाहिए। इस सम्बन्ध में बहुत कम लोग अपनी राय दे रहे थे। अधिकांश लोग ये कह रहे थे इसको छूना नहीं है। हाथ लगाकर देखो, कौन तोड़ता है इसे। कोई कहता है इसके ऊपर बना लो कोई कहता है इसी सामान से बनाओ। महानुभाव! हमें लगता है अपने जीवन के निर्माण के सम्बन्ध में भी कुछ लोग इस प्रकार के हैं कि अपनी पुरानी आदतों को छोड़ना नहीं चाहते पर अपना अच्छा भविष्य बनाना चाहते हैं। कुछ ऐसे हैं कि पुरानी आदतें ज्यों कि त्यों बनी रहें, नई अच्छी आदतें ग्रहण कर लें, विरले ही व्यक्ति ऐसे होते हैं जो अपनी अनादिकालीन क्रोध, मान, माया, लोभ, हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह, स्पर्शनइन्द्रिय, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण के विषय, इन सब सम्पत्ति को जो सम्पत्ति के रूप में इसे मान बैठे हैं, उसे छोड़ने के लिए तैयार हो जायें और अहिंसादि महाव्रत, प्रशम, संवेग,

अनुकम्पा,आस्तिक्य आदि गुण मैत्री, प्रमोद, माध्यस्थ, कारुण्य भावनाओं को स्वीकार करने के लिए तैयार हो जायें। और सत्यता यही है कि पुराने को मूलतः त्याग न किया जाये तो नूतन भी पुराना हो जाता है। किसी महिला ने छाछ के मटके में अच्छा दूध रख दिया और थोड़ी देर बाद देखा तो वह दूध, दूध नहीं रहा दही बन गया क्यों? उसमें तो जामन भी नहीं डाला, ऐसा इसलिए क्योंकि मटका तो छाछ का था उसमें डालने की क्या आवश्यकता है? उसमें तो छाछ के संस्कार पहले से हैं, यदि वह मटका कोरा होता तो दूध नहीं जमता, या उसे कई बार साफ कर लिया होता तो भी नहीं जमता, या गर्म पानी से साफ करने पर जब मटके में उसका अंश भी नहीं रहता तो संभावना थी कि दूध सही बना रहता। जिस पात्र में नींबू रखा हो उसे खाली कर दूध भरेंगे तो वह फटेगा ही ऐसे ही हमें अपने जीवन का निर्वाह करने के लिए पहले पुरानी आदतों को, पुराने संस्कारों को, बुराईयों को एकदम त्यागना ही होगा, उन्हें त्यागे बिना किसी भी कीमत पर हम नूतन अवस्था को प्राप्त नहीं कर सकते। कोई व्यक्ति चाहे कि मैं अपने फटे-पुराने कपड़े उतारे बिना ऊपर से नये कपड़े पहन लूँ क्या होगा? फटे-बदबूदार कपड़ों के ऊपर अच्छे से अच्छा सूट पहनने से अच्छा थोड़े ही लगेगा, यदि कहीं गंदगी पड़ी है उसके ऊपर से फूल डाल दिये, इत्र छिड़क दिया तो क्या वह गंदगी नहीं कहलायेगी। प्रायः कर के हमारे आपके साथ ऐसा ही होता है हम मूलतः गंदगी को छोड़ना नहीं चाहते गंदगी को ऊपर से साफ करना चाहते हैं। जब तक बेशर्म की जड़ उखाड़कर न फेंकी जाये, तब तक वह पेड़ बार-बार काटते रहो, कितनी ही बार काट लो ज्यों का त्यों उगता रहेगा। बुराई भी बेशर्म के पेड़ की तरह से होती है, तोड़ते जाओ, काटते जाओ नष्ट नहीं होगी। चने के पेड़ को खोदते जाओ बढ़ता जाता है, कई पेड़ ऐसे होते हैं जिनकी शाखा काटते जाओ वे बढ़ते चले जाते हैं किन्तु मूलतः खोदने पर ही नष्ट होते हैं, चाणक्य की तरह से यदि उनके पैर में काँटा चुभ गया तो केवल उसे खोदा ही नहीं खोद करके उसमें वहीं छाछ नमक डाल रहे थे ताकि जड़ तक गल जाये हमें भी हर एक

बुराई की जड़ तक को गलाना है, खोदकर के नहीं बैठना है, खोदकर अकेले बैठेंगे तो संभावना है दोबारा पुनः बुराई चुभ जाये, संगति में पहुँचे और बुराई पुनः मिल जाये।

हम अपने घर को स्वर्ग कैसे बनायें, यदि बालू पर कोई रेत की दीवार खड़ी की जाये तो मकान न बन सकेगा, बिना नींव खोदे नदी की बालू पर यदि ईटों से भी दीवार चिनेंगे तो वह टिकेगी नहीं गिर जायेगी, यदि महल अच्छा बनाना है तो बालू को अलग करके नीचे खोदना पड़ेगा। जहाँ तक मिट्टी पक्की न आ जाये चट्टान आदि न आये, तब तक खोदना चाहिए, बालू-बालू निकलेगी, तो वहाँ महल टिक नहीं पायेगा। हमें अपने घर को स्वर्ग बनाना है तो स्वर्ग की दीवार नरक में जाकर खड़ी नहीं करना है, यदि स्वर्ग की दीवार नरक में जाकर खड़ी कर दी जायेगी तो वह भी नरक हो जायेगी। नरक की दीवार पर स्वर्ग नहीं बनता है। झौंपड़ी के दीवाल पर महल खड़ा नहीं किया जा सकता एक टेक गाढ़ने के लिए आपने छप्पर बनाया और जमीन पर टेक गाढ़ दी तो उस टेक पर क्या महल टिक जायेगा? ऐसे ही जीवन को जितना उत्कृष्ट, उच्चतम, श्रेष्ठ बनाना है तो इसकी नींव भी बहुत अच्छी होना चाहिए उसमें पड़े हुए पत्थर काँटे गंदगी ये सब निकालकर बाहर करो, निकालकर बाहर करोगे तो अच्छा रहेगा अन्यथा शमशान में जाकर के महल बनाओ तो वहाँ पर बदबू आयेगी, भूतों का डेरा दिखाई देगा, जहाँ पर किसी गड्ढे में गंदगी डाली जाती थी वहाँ पर जाकर मंदिर बनाओगे तब भी उसकी वर्गणायें सैकड़ों सालों तक बदबू मारती रहेंगी।

अतः सब गंदगी को बाहर निकालना जरूरी है दरअसल में अभी हमारा जीवन जो नरक बना हुआ है तो पहले उन बातों को जीवन से निकाल कर बाहर फेंकना होगा जिनके कारण हमारा जीवन नरक तुल्य बना हुआ है। नरक किसे कहते हैं- न रति भावः इति नारका" जहाँ पर नारकी जीव रहते हैं वह नरक है वैसे नरक कोई नरक नहीं है जहाँ पर नारकी जीव हैं या नारकी जैसा जीव रहता है वो नरक ही कहलायेगा। चाहे कहीं भी हो नरक से

आशय ऐसा नहीं कि नीचे वाले बिल हैं नरक मध्य लोक में भी हो सकता है नरक और कहीं भी हो सकता है।

एक बार एक नेता से किसी देव ने आकर कहा मैं तुम्हारी देश भक्ति से प्रभावित हूँ और तुम्हें स्वर्ग में लेकर जाना चाहता हूँ नेता तैयार हो गया कि तुमने बड़ी कृपा की, इतने में और नेता आ गये वे बोले नहीं, ये नहीं हो सकता, इस अकेले को हम स्वर्ग नहीं जाने देंगे, तुम ये बताओ कि तुम्हें कितना टैक्स लेना है हम उतना ही पैसा देंगे। दान कहोगे दान करेंगे पर स्वर्ग में तो हम भी जायेंगे बेचारा देव घबरा गया कहने लगा ठीक है मैं तुम सबको स्वर्ग ले जाता हूँ, इतने में पहला वाला व्यक्ति बोला भैया मुझे क्षमा करो, मुझे तुम नरक में भेज दो, पूछा क्यों, ऐसी क्या बात हो गई वह बोला जहाँ ये भ्रष्ट नेता पहुँच जायेंगे वह स्वर्ग भी नरक बन जायेगा, मैं ऐसे स्वर्ग में नहीं जाना चाहता। तो फिर नरक-स्वर्ग है क्या? अपने घर को स्वर्ग कैसे बनायें? घर का आशय क्या है? घर का आशय चार दीवारी है क्या? उसे तो मकान कहते हैं घर तो वह है जहाँ गृहिणी रहती है। जब आप कहीं जाते हैं आपसे पूछा जाता है आप अकेले आये हैं या पूरा घर? नहीं पूरा घर आया है तो क्या घर को उठाकर ले आये, नहीं! गृहिणी साथ आयी है तो पूरा घर कहलाता है, यदि जिस घर में स्त्री न हो सिर्फ पुरुष ही पुरुष हों तो वह घर-घर नहीं लगता है, किराये के मकान में रह रहे हो, घर तो तभी बनता है, जब घर में गृहिणी आ जावे पैसों से तो मकान बनाये जाते हैं पैसों से घर नहीं बनाये जाते हैं घर तो प्रेम से बनते हैं जिसके साथ तुमने प्रेम स्थापित किया है प्रेम के साथ संसार की वृद्धि हुई है जिससे तुम्हारा घर बन गया।फिर तुम गृहस्थ हो गये, घर में लीन हो गये, घर में गृहस्थी में लीन होने का आशय है व्यक्ति ईंट की दीवार में इतना लीन नहीं होगा जितना गृहिणी में लीन होता है, आसक्ति गृहिणी के प्रति होती है यदि गृहिणी साथ में हो तो रामचन्द्र जी भी जंगल चले गये और गृहिणी साथ में नहीं तो स्वर्ग में भी अच्छा नहीं लगता। घर को स्वर्ग बनाने के लिए पहले हमें ऐसी बातों को निकालकर फेंकना होगा जिन बातों के कारण

घर नरक बना हुआ है, तो पहली बात थी- नारकी जीवों में आपस में प्रेम नहीं होता है, जिस घर में आपस में प्रेम नहीं है समझ लेना वह घर चाहे 4 Members का हो चाहे 10 का हो चाहे 2 का हो पर वह घर स्वर्ग नहीं बन सकता। वह तो नरक के समान होता है आपस में प्रेम नारकी कर ही नहीं सकते। एक बिल में 1, 4, 6, 10 हजार, लाख, करोड़ों, अरबों, खरबों, असंख्यात् नारकी रहते हैं किन्तु किसी नारकी का किसी नारकी से प्रेम नहीं होता ''न रता इति नारकाः'' जिधर रति भाव नहीं है, प्रेम भाव नहीं नारकी कहलाते हैं। दूसरी शर्त- दूसरी बुराई है अविश्वास यदि यह बुराई आपके घर में है तो वह भी नरक के समान है। यदि आपस में दो भाई-भाई में विश्वास नहीं है, पति-पत्नी में विश्वास नहीं है, पिता-पुत्र में विश्वास नहीं है, माँ-बेटी में विश्वास नहीं है अन्य रिश्तों में विश्वास नहीं है तो वह घर नरक के समान है। विश्वास नहीं है तो समझो संसार में कुछ नहीं है एक घर में रहने वाले दो भाई एक पलंग पर भी सो रहे हैं यदि विश्वास नहीं एक-दूसरे पर तो शत्रु हैं, दोनों में बहुत दूरियाँ हैं। हमें तन की नहीं मन की दूरियों को दूर करना है यदि अपने घर में अविश्वास का जीवन आप जी रहे हैं तो निःसंदेह समझिये आपका जीवन स्वर्ग तुल्य नहीं हो सकता है।

अगली बात जो नारकीय जीवों में पायी जाती है अन्यायिक छीना-झपटी। अन्याय, यदि आपके घर में चल रहा है तो समझो आपका घर भी नरक तुल्य है। नरक में कभी न्याय नहीं होता कौन नारकी किस पर वार कर दे वहाँ कोई नियम नहीं होते ।छोटे का विचार नहीं होता कोई बड़ा नहीं होता है वहाँ तो जो चल रहा है सो चल रहा है जिस पर वार कर दिया सो कर दिया, कौन नारकीय कब क्या कर दे, कुछ भी नहीं पता। नरक में अगली बात अभक्ष्य भक्षण। नारकियों में एक बात होती है नारकियों का शरीर ही काट-काट कर नारकियों को खिला दिया जाता है। उनका शरीर वैक्रियक होता है जिस घर में अभक्ष्य भक्षण किया जाता है ऐसा परिवार या ऐसे व्यक्ति आज नहीं तो कल नरक के द्वार को देखने को मजबूर हो जायेंगे।

एक जगह लिखा है कृष्ण लेश्या वाला व्यक्ति नारकीय होता है क्रूर परिणाम वाला क्योंकि नारकीय की कषाय बहुत तेज होती है, इतना क्रूर परिणामी होता है कि क्षणभर भी उसे शांति नहीं दिन रात मारकाट चलती रहती है उसके जीवन में शांति का अभाव, क्षमादि धर्म नहीं, कुछ भी नहीं यदि आपके घर में भी कोई क्रूर परिणामी है और कषाय के आवेश में आगे-पीछे सोचना भूल जाये, जो हाथ में आये उसी को दे मारे समझो नारकी जैसा है, क्रोध में आपे के बाहर, अरे क्रोध भी हो तो कम से कम बुद्धि तो रखे किन्तु मारे क्रोध के बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, अरे क्रोध में इतना हो सकता है कि ऊँची आवाज में बोल दिया या डाँट दिया ये थोड़े ही है कि हाथ में जो कुछ पड़ गया तलवार आयी तो तलवार का वार, उठाई बंदूक और शूट कर दिया, ऐसा नहीं, यदि क्रोध में पूरा विवेक ही नष्ट हो गया तो तुममें और नारकी में क्या अंतर रहा तो ये बात भी नारकी का लक्षण है। एक और बात नारकी जीवों में तीव्र यातना। यदि तुम किसी को तीव्र दुःख दे रहे हो या कोई तुम्हें तीव्र दुःख दे रहा है बुद्धिपूर्वक, तो समझ लेना तुम्हारा जीवन नारकीय तुल्य है, क्योंकि दयालु व्यक्ति कभी किसी को दुःख देता नहीं और दयालु व्यक्ति तीव्र दुःख भोगता भी नहीं संक्लेशता के साथ, संतोष के साथ समता के साथ भोगता है, कई बार तीव्र पाप का उदय आ जाता है, कोई भी रोग आदि आ गया तब भी कषाय की तीव्रता नहीं रहती। यदि तुम किसी को बुद्धि पूर्वक दुःख दे रहे हो तड़पा-तड़पा करके मार रहे हो तो समझ लेना तुम्हारा जीवन नारकीय तुल्य है तुम्हारे घर में नरक का वास है यदि समता रूप परिणामों से सहन कर रहे हो तो समझो तुम्हारे घर में स्वर्ग का वास है, अगली बात है कड़वे शब्द, तीखे शब्द, कटुशब्द, निंदा के शब्द ये शब्द इनका प्रयोग यदि तुम्हारे घर में भी कोई ऐसे शब्दों का प्रयोग करता है जैसे मैं तुझे काट दूँगा, चीर दूँगा, तेरे टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा, तू क्या समझता है, ऐसे शब्द यदि कोई बोलता है तो समझ लेना या तो वह नरक से निकल करके आया है या नरक में जाने की तैयारी कर रहा है वर्तमान में उसका घर भी

नरक के तुल्य है, जो किसी को समूल नष्ट करना चाहता है समझो वह भी नारकीय तुल्य है जैसे जो व्यक्ति जमीकंद खाते हैं किन्तु जैन दर्शन में जमीकंद का त्याग कराया जाता है ऐसा क्यों? जमीकंद का त्याग करो, आलू का त्याग करो, गाजर-मूली का त्याग करो तब आप आहार दे सकते हो महाराज जी को। क्यों त्याग कराया जाता है? जमीकंद खाने वाला व्यक्ति दयालु नहीं कहलाता है, वह क्रूर परिणामी कहलाता है नरकायु का बंध करने वाला होता है, आप पूछेंगे क्यों? क्योंकि गाजर, मूली जो भी आप खाओगे जड़ से उखाड़ोगे, जैन दर्शन कहता है कोई फल गिरा है उसको खाओ, ज्यादा है तोड़कर खा लिया पर तुमने उसका पूरा पेड़ ही उखाड़ दिया, दूसरे का जीवन पूरा नष्ट करके तुम खाना चाहते हो तो जमीकंद खाया तो माँस के बराबर है, अपने थोड़े स्वाद के लिए दूसरे का पूरा जीवन नष्ट करना यह कषाय की तीव्रता नहीं तो और क्या है? जैन दर्शन कहता है कि जमीकंद का सेवन करने वाला व्यक्ति कहता है वाह क्या आलू का परांठा है, क्या गाजर का हलवा है, अरे चाय बिना अदरक के तो टेस्ट नहीं दे रही है छोंक लगेगा तो प्याज का वरना सब बेकार, दूसरे के प्राण जा रहे हैं और तुम्हें आनंद आ रहा है यदि दूसरे के प्राण लेने में तुम्हें आनंद आ रहा है तो ये रौद्र ध्यान है, और रौद्र ध्यान नरक का कारण है यदि ऐसी प्रवृत्तियाँ तुम्हारे घर में होती हैं तो तुम्हारे घर में ये लक्षण नरक जैसे हैं ये लक्षण पहले तुम्हें निकालने पड़ेंगे, स्वर्ग बनाने के पहले भूमिका तैयार करनी पड़ेगी, स्वर्ग की नींव तो बाद में रखी जायेगी। पहले जो नरक का खंडहर है नरक का बिल उसे तोड़कर के स्वर्ग बनाया जायेगा कोई चाहे टूटे-फूटे मकान पर फ्लेट बना दिये जायें बनेंगे क्या? फ्लेट पर फ्लेट बनाते जा रहे हैं कब बनेगें जब नीचे से नींव मजबूत हो।

महानुभाव! तो जो बुराइयाँ हो सकती हैं, दुराशया दुराशा अर्थात् किसी भी व्यक्ति की बातों का अन्य अर्थ निकालना, खोटा आशय, कोई बात किसी ने कही, कही तो अच्छे के लिए, अच्छी तरह से कही किन्तु सामने वाले

को तो खोटा अर्थ निकालना है जैसे जौंक गाय के स्तन पर चिपक कर भी खून चूसती है, वहाँ दूध भी है किन्तु उसे दूध दिखता नहीं है तो खून चूसती है ऐसे ही जो व्यक्ति १०० अच्छाइयों में से भी यदि एक बुराई है तो १०० में से एक बुराई दिखाई दे जायेगी। १०० अच्छाई न दिख पायेंगी। अच्छाईयाँ दिखाई नहीं देती। कोई भी गुलाब ऐसा नहीं जिनके साथ काँटा नहीं, हर व्यक्ति में कोई न कोई बुराई होती है। किन्तु जिस व्यक्ति को बुराई ही बुराई दिखाई दे तो समझो वह दुर्गति का पात्र बनने जा रहा है जिस व्यक्ति को अच्छाईयाँ दिखाई दें समझो सुगति का पात्र है, चीजें दोनों हैं गिलास में आधा ग्लास पानी है जो कहे आधा ग्लास खाली है वह नकारात्मक सोच के साथ जी रहा है और जो कहता है आधा ग्लास भरा है वह समझो सकारात्मक सोच के साथ जी रहा है, एक को खाली दिखता है एक को पानी दिखता है जिस व्यक्ति को छोटा सा छोटा दोष भी दिखाई देता है वह व्यक्ति दोषों का ग्राहक है छिद्रान्वेषी है वह गुणज्ञ नहीं है। गुणग्राहक नहीं है, वह तो बुराईयों का पिटारा है उसके पास बुराईयों को ग्रहण करने की चुम्बक है जहाँ बुराई होती है उसे खींच लेता है उसे अच्छाई तो दिखती ही नहीं है, अच्छाई का चश्मा उतार कर बुराई का काला चश्मा लगा लिया। इससे सफेद दीवार भी उसे काली दिखाई दे रही है तो ये विशेषता प्रायःकर के उन लोगों में पायी जाती है, जिनका जीवन जिनका घर नारकीय तुल्य बना हुआ है। महानुभाव! सबसे पहले घर को स्वर्ग बनाने के लिए इन सबका परिहार करना पड़ेगा मैं समझता हूँ यद्यपि ये सब बुराईयाँ अपरिहार्य हैं आप लोगों के लिए किन्तु इनका परिहार भी अनिवार्य है, अपरिहार्य नहीं होती तो अभी तक आप ने कब की छोड़ दी होती किन्तु है तो परिहार के योग्य ऐसा भी चलो देख लेंगे छोड़ने का प्रयास करेंगे।नहीं पहले बुराई अलग करो ऐसा नहीं है मुँह में नमक दबाये रखो और शक्कर का स्वाद लेना चाहो तो नहीं चलेगा। उसको तो निकालकर बाहर करो अन्यथा वह शक्कर भी तुम्हें खारी लगेगी, यदि कोई भ्रमर गंदगी के ऊपर बैठकर के उसके कण को अपने मुँह में दबा ले और फिर फूलों पर

बैठ जाये तो उसे फूलों से भी दुर्गंध आयेगी दुर्गंध फूलों से नहीं उसके अंदर जो गंदगी भरी है उससे आ रही है, हमारे भी घर के अंदर गंदगी भरी हुई है इसे निकाल कर बाहर फेंकना है जो कपड़े रंगने वाले होते हैं वे पहले रंगाई करते हैं या वे पहले धुलाई करेंगे फिर रंगाई, दीपावली पर पहले घर की सफाई करेंगे फिर decoration करेंगे मंदिर जी के शिखर पर यदि काई जम गई है और पेन्ट करना है तो क्या करोगे? सीधे पेन्ट नहीं करोगे । सफाई कर खरोंच-खरोंच कर काई हटाकर फिर पेन्ट करोगे। गंदगी को निकालना जरूरी है, किसान खेत में बीज बोता है उसके लिए पहले क्या करता है बुवाई के लिए पहले जुताई करता है वह भी 1-2 या 4-6 बार नहीं यदि गेहूँ बोने हैं तो बीस बार, यदि गेहूँ के लिए 20 बार जोत दिया और 6 बार पानी दिया तो फिर 15-20 क्विंटल गेहूँ होगा और यदि ऐसे ही डाल दिया तो बीज भी वापिस लौटकर नहीं आयेगा तो जुताई भी बहुत आवश्यक है। उसके कंकड़ पत्थर, झाड़ झंकड़ सब उठाकर फेंकने के बाद ही ठीक रहेगा यदि ऐसा नहीं तो सब व्यर्थ है। तो महानुभाव! पहली बात तो यह कि ये चीजें अपने जीवन से अलग होना चाहिए, अब दो बातें हैं एक बात है कि हम स्वर्ग को अपना घर कैसे बनायें और दूसरी बात अपने घर को स्वर्ग कैसे बनायें? क्या चाहते हैं? अपने घर को स्वर्ग बनाना चाहते हैं यदि स्वर्ग को अपना घर बनाना चाहते हैं तो शरीर को छोड़ करके जाना पड़ेगा, देव बनकर के उसको अपना घर बनाना पड़ेगा, तब तो जीते जी इस शरीर से स्वर्ग को अपना घर नहीं बना सकते किन्तु यदि अपने घर को स्वर्ग बनाना है तो प्रेम से,संयमपूर्वक,मिलजुल कर रहें। जो जीते जी अपने घर को स्वर्ग बना लेता है उसे नियम से स्वर्ग अपना घर जैसा मिल जाता है किन्तु जिसने जीते जी अपने घर को नरक जैसा बनाया है उसे आगे चलकर नरक ही मिलेगा, जो जैसे वातावरण में रहता है उसे वैसा वातावरण मिलता है भगवान आदिनाथ स्वामी सर्वार्थ सिद्धि से मध्यलोक में चयकर आये तो इंद्र ने यहाँ पर भी उनकी व्यवस्था वैसी ही उत्तम की, उनका महल भी ऐसा बना दिया, रत्नों के

विमान जैसा और समस्त वस्त्राभूषण भी स्वर्ग से आते थे और जो यहाँ पर भी नारकी जैसा बनकर रह रहा है आज नहीं तो कल उस अवस्था को प्राप्त हो जायेगा। महानुभाव! यद्यपि कोई जीव मरना नहीं चाहता सिवाय नारकी के, नारकी मरना चाहते हैं इसलिए तीन पुण्यायु हैं देवायु, मनुष्यायु, तिर्यंचायु केवल नरकायु ही पाप प्रकृति है गति की अपेक्षा से देवगति, मनुष्य गति पुण्य प्रकृति हैं, और तिर्यंच गति,नरक गति पाप प्रकृति है आयु की अपेक्षा से तिर्यंचायु को पाप प्रकृति नहीं लिखा। महानुभाव! अब स्वर्ग को अपना घर बनाने की बात छोड़ दो, क्योंकि अभी तो कोई तैयार नहीं, महाराज जी अब तो घर को स्वर्ग कर लेंगे जब घर स्वर्ग बन जायेगा तब तो स्वर्ग की भी कामना नहीं, कामना नहीं है फिर भी मिलेगा।क्या करें घर को स्वर्ग बनाने के लिए इसके उल्टे चलें। पहली बात आपस में प्रेमभाव जहाँ पर आपस में प्रीति है निःसंदेह उस घर में स्वर्ग जैसा आनंद आता है चाहे घर में गरीबी हो, घर में चार भाई हों एक थाली में बैठकर भोजन कर लें ज्यादा हुआ तो माँ भी उसी में साथ बैठ गयी पाँचों बड़े ही प्रेम से भोजन कर रहे हैं देखो आज चार भाई हैं तो चारों की अलग-अलग कोठी है वे चारों भाई एक साथ बैठकर भोजन नहीं कर सकते, माँ के साथ भोजन किये तो मुद्दतें बीत गईं माँ बेचारी तरस रही है।कभी एक थाली में भोजन कर रहे थे केवल सूखी रोटी रखी थीं चटनी रखी थी, उसमें चारों को आनंद आ रहा था अच्छा लग रहा था स्वर्ग के देवों के जैसे कंठ से अमृत झरता है वैसे ही उनके कंठ से अमृत झर रहा था किन्तु आज अच्छे से अच्छे पकवान सबके सामने हैं किन्तु उसमें भी आनंद नहीं आ रहा कोई स्वाद नहीं है रस नहीं है आनंद वस्तु में नहीं अपने कंठ में है और कंठ में से आनन्द तब झरता है जब भावना अच्छी होती है Glands होते हैं जिनसे harmones स्रावित होते हैं।भावनाओं के बल से स्रावित होतें है भावना जैसी होती है वैसे harmones स्रावित होते हैं आपकी ग्रंथियों से। भावना दूषित हो तो भोजन भी दूषित हो जाता है। आनंद वे गरीब ले रहे हैं जो भोजन कर रहे हैं एक ही थाली में बैठकर थाली छोड़ो पत्तों की पत्तल

बना करके खा रहे हैं पत्तल भी छोड़ो यदि एक के हाथ में रख दिया उसी में सब तोड़कर खा रहे हैं और पानी भी एक कुल्हड़ में सब पी रहे हैं झूठे का कोई विकल्प ही नहीं क्या प्रेमभाव है बेटा मिठाई खा रहा है पापा के मुँह में दे दी क्या आनंद आ रहा है उसमें भी यदि तुम्हारे लिए स्पेशल खाने को मिठाई आ जाये तो उसमें भी कोई आनंद नहीं, आनंद किसमें है प्यार में, स्वर्ग में ये प्रेम है, यदि तुम्हारे घर में प्रेम की प्रीति की स्थापना हो जाये तो समझो तुम्हारे घर में स्वर्ग की एक ईंट लग गई है दूसरी स्थिति है भीति, पहली थी प्रीति। दूसरी भीति अर्थात् पापों से भय। जिस घर में पापों से भीति होती है पापों से डर होता है भूलकर के भी कोई पाप नहीं करता समझो वहाँ स्वर्ग की ईंट लग गई। डरो, एक बार को बाप से मत डरो पर पाप से डरो। बाप तो क्षमा कर देगा किन्तु पाप कभी भी क्षमा नहीं करेगा। बाप तुम्हें फिर भी अपना लेगा और तुम उसकी अविनय करोगे तब भी तुम्हें अपनी सम्पत्ति देगा किन्तु पाप अपना बुरा फल दिये बिना नहीं जायेगा वो कहेगा बेटा तूने जैसा किया अब वैसा भोगो।

दगा किसी का सगा नहीं है नहीं मानो तो कर देखो।
जिस-जिस ने भी दगा दिया है उसके जाके घर देखो।।

तो ये दगा पाप कभी किसी का सगा नहीं होता, महानुभाव! व्यक्ति एक बार अभिशाप से मुक्त हो सकता है वैदिक परम्परा में आता है उदाहरण कि अहिल्या को अभिशाप लगा हुआ था रामचन्द्र जी की पद की धूलि से वह शिला से सुन्दर नारी बन गई, और भी कई उदाहरण हैं जो अभिशाप से मुक्त हुए किन्तु पाप से मुक्त होना बड़ा कठिन है, पाप भोगना पड़ता है, चाहे तीर्थंकर आदिनाथ स्वामी भी बन गये तब भी १३ महीने तक आहार नहीं मिला, तीव्र अंतराय कर्म का उदय आया, अंतराय कर्म क्या है पाप कर्म ही तो है। पार्श्वनाथ स्वामी तीर्थंकर बन गये तीन कल्याणक भी हो गये गर्भ, जन्म तप, बस केवल ज्ञान होने वाला था तब भी उनके ऊपर ओले-शोले पत्थर पानी, अग्नि की वर्षा, पानी की वर्षा संवर देव द्वारा की गई ये कर्म नहीं

छोड़ते, चक्रवर्ती का भी मान भंग हो गया, तीर्थकरों पर भी उपसर्ग आये सुपार्श्वनाथ स्वामी पर उपसर्ग आया, महावीर स्वामी पर भी उपसर्ग आया, पाण्डवों पर उपसर्ग आया, कर्मों ने किसी को नहीं छोड़ा, रामचन्द जी जैसे बलभद्र को राज त्यागकर जंगल में जाना पड़ा। महानुभाव! जहाँ पापों से भीति होती है वहाँ निःसंदेह स्वर्ग की स्थापना होती है। तीसरी बात है रीति। रीति का आशय क्या है?law & order,administration अनुशासन।बड़े व्यक्ति छोटों को प्यार और वात्सल्य दें ये रीति है छोटे व्यक्ति बड़ों का आदर करें सत्कार करें, विनय का ध्यान रखें ये रीति है जो एक पूर्व परम्परा चली आ रही है, जो सिस्टम पहले से चला आ रहा है, उसके बाहर नहीं जाना, उसके बाहर गये तो समझो बस स्वर्ग से बाहर चले गये। रीति-रिवाज सबके होते हैं आप कहते हैं, हमारी भारतीय रीति ऐसी है अच्छी रीतियाँ ही रीति-रिवाज कहलाते हैं आज तो बुरी रीति को भी रीति कहने लगे हैं किन्तु रीति का अर्थ होता है अच्छी परम्परा, जो अच्छे कार्यों की परम्परा बनी है वह भारतीय संस्कृति में रीति कहलाती है। महानुभाव! जहाँ पर अच्छी रीतियों का परिपालन किया जाता है जैसे महाराणा प्रताप ने वन में जाकर के घास की रोटी तो खा ली पर माँस की बोटी नहीं खाई, तो ये वंशों के रीति-रिवाज रहे, माँस नहीं खा सकते, रामजी ने जंगल में रहना स्वीकार कर लिया, किन्तु पिता जी की आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया ये रीति है-

रघुकुल रीति सदा चली आई, प्राण जायें पर वचन न जाई। पाण्डव यदि जुए में हार गये तो वनवास को स्वीकार किया किन्तु वहाँ युद्ध नहीं किया कि हमें हमारा राज्य चाहिए। तो रीति क्या है रीति का अर्थ होता है, अच्छे-अच्छे कार्यों की परम्परा, अगली चौथी बात है- आत्म प्रतीति, जिस में अपनी आत्मा की प्रतीति है। नारकी लोग सब कुछ ध्यान रखते हैं किन्तु आत्मा को भूल जाते हैं धन को याद रखेंगे, संचय कर लेंगे और जो व्यक्ति नरक में जाने वाले हैं वह अपनी आत्मा को भूल कर के सब कुछ परिग्रह इकट्ठा कर सकता है किन्तु आत्मा को भूल जाता है जब आत्मा को ही भूल

गये तो बचा ही क्या किन्तु यहाँ पर क्या है स्वर्ग बनाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को आत्म प्रतीति हो, रामचन्द्र जी के भाई भरत, रामचन्द्र जी जब वन से लौटकर नहीं आये तो रामचन्द्र जी की खड़ाऊँ को सिंहासन पर विराजमान करके स्वयं सन्यास लेकर के साधना में संलग्न रहे, साधु नहीं बने पर सन्यासी जैसा जीवन जिया, आत्मा की प्रतीति घर में रहकर भी की जैसे जल में कमल। जैसे सोना यदि कीचड़ में पड़ा है तो सोना-सोना ही है लोहा नहीं हो जायेगा। ऐसे आत्मा की प्रतीति की भरत चक्रवर्ती ने , 6 खण्ड के राज्य का संचालन किया फिर भी ऐसे रहे जैसे जल में कमल।मुनि नहीं बन सकते तो मुनीम बनो। मुनीम कैसे रहता है सेठ को व्यापार में चाहे घाटा लगे, चाहे मुनाफा हो मुनीम जानता है मुझे तो 10 हजार रुपये मिलने हैं, दस करोड़ का लाभ भी हो जाये तो सैलरी तो 10 हजार ही देंगे। दस करोड़ का लाभ भी हो जाये तो भी 10 हजार ही देंगे तो जैसे मुनीम को उसके व्यापार में आसक्ति नहीं है चाहे दिन में लाखों रुपये इधर-उधर करता रहे ऐसे ही जिसे आत्मा की प्रतीति होती है वह पर वस्तुओं में आसक्त नहीं होता। महानुभाव! अगली बात है धर्मानुष्ठान में उत्साह जिस घर-परिवार में धर्म के प्रति उत्साह रहता है यदि वहीं कोई धर्म का कार्य है, सभी घर के लोग उत्साहित हैं, प्रातःकाल से सभी तैयार होकर पूजा-पाठ करने बैठ गये, सभी स्वाध्याय कर रहे हैं, जिस घर में ऐसा माहौल बना हुआ है वह स्वर्ग जैसा है चाहे झोपड़ी ही क्यों न हो, फिर भी स्वर्ग है, तो धर्म के अनुष्ठान में उत्साह होना चाहिए। मंदिर बन रहा है भाई बड़ा मंदिर बनवा रहा है ठीक है सबसे पहले मेरा नाम लिखो सहयोग में, चुपचाप गया लेना है तो ठीक है वरना गुप्त दान में डालकर आ जाओ, उसकी भावना सबसे पहले है, भावना की कोई कीमत नहीं है क्या? तो कहने का अर्थ है कि धर्म के कार्यों में उत्साह हो जिस परिवार में धर्म के कार्यों के प्रति उत्साह रहता है निःसंदेह उस परिवार में स्वर्ग जैसा आनंद आता है, कभी भी नगर में त्यागी व्रती आयें तो उत्साह से भरकर माँ चौका लगा लो, रथयात्रा, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा किसी भी कार्य में उत्साह होना चाहिये, आज

अनुकूलता है, कोई अंगोपांग हीन नहीं है, उत्तम पात्र बनकर पूजा कर सकते हो भगवान न करे कोई दुर्घटना घट गई तो रखी रहेगी यह करोड़ों की सम्पत्ति किन्तु प्रतिष्ठाचार्य तुम्हें पात्र न बनायेंगे। सौधर्म इन्द्र या कोई पात्र न बन पाओगे वहाँ सबके साथ पूजा न कर सकोगे। तो महानुभाव! उत्साह होना चाहिए क्योंकि न कल का भरोसा है न पल का भरोसा। अगला है शक्ति का सदुपयोग स्वर्ग के देव शक्ति का सदुउपयोग करते हैं नारकी जीवों का शरीर भी वैक्रियक है पर वे उसका दुरुपयोग करते हैं स्वर्ग के देव अपनी शक्ति का सदुपयोग करने के लिए मूल शरीर को छोड़कर उत्तर शरीर से यहाँ आते हैं धर्मात्माओं की रक्षा के लिए। आप भी अपनी शक्ति का सदुपयोग चाहे तन की शक्ति हो, वचन की हो, धन की हो उसका सदुपयोग करना प्रारम्भ कर देना निःसंदेह घर में ही स्वर्ग की स्थापना हो सकती है। महानुभाव! अगली बात है- वचनों की मधुरता। जिस परिवार में मीठे-मीठे वचन बोले जाते हैं उस व्यक्ति की गाली भी अच्छी लगती है, उसका डाँटना भी अच्छा लगता है और इसके विपरीत यदि कोई अपनी लाल-लाल सी आँखें दिखाते हुए भोजन करने के लिए भी कहे तो पहले तो इच्छा ही ना होगी। घर में माँ-पत्नी, भाभी कोई भी गुस्से में होकर भोजन परोसे तो तुम्हें भूख भी होगी तब भी कह दोगे आप ही खालो मुझे नहीं खाना, और कहीं कोई कहता है आइये, स्वागत है। यदि मीठे शब्द बोले फिर चाहे वह कैसा ही भोजन कराये तो आप कहोगे भैया ठीक है यहीं खा लेता हूँ। कोई चिल्लाकर पड़े कटु शब्द बोले तो वहाँ स्वर्ग कैसे आ पायेगा, यदि तुम्हारे पास गुड़ खिलाने के लिए नहीं है तो ना सही किन्तु गुड़ जैसी मीठी बात तो कह दो, वचनों की मधुरता घर में स्वर्ग की स्थापना कर सकती है।

महानुभाव! अगली बात है गुणानुराग! अनुराग व्यक्ति के प्रति नहीं, अनुराग व्यक्ति के गुणों के प्रति हो। गुण सर्वत्र, सर्वदा सार्वभौमिक पूज्यनीय सम्मानीय अभिवंदनीय होते हैं ऐसा कोई काल नहीं जहाँ गुणों की पूजा न हो, ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ गुणों की पूजा न हो। ऐसा कोई मनुष्य नहीं जो

गुण-दोष की पहचान जानता हो तब फिर गुणों की पूजा न करे, गुण पूजनीय होते हैं यदि हमारा गुणानुराग है तो, हम बुराईयों में से भी गुण खोज सकते हैं, बुराईयों में से भी अच्छाईयाँ खोजी जा सकती हैं। श्री कृष्ण एक दिन पाण्डवों के साथ वनविहार के लिए गये मार्ग में एक कुत्ता पड़ा हुआ था, पाण्डव नाक ढक कर के आगे दौड़ने लगे, श्री कृष्ण ने नाक बंद नहीं की थोड़ा देखकर के आगे बढ़े, और कहने लगे वहाँ देखो इस कुत्ते के दाँत कितने अच्छे हैं, एक सड़े हुए कुत्ते में भी अच्छाई खोज निकाली इसे कहते हैं बुराई में से अच्छाई खोजने की कला। महानुभाव! ये अच्छाई खोजने की कला जिसके पास है ऐसा व्यक्ति अपने घर को स्वर्ग बनाने में समर्थ हो सकता है और स्वर्ग को सभी चाहते हैं क्यों कि संसार की सबसे अच्छी चीज क्या मानी जाती है। सिर्फ दो चीज एक स्वर्ग और एक अपना स्वर्ग से सुंदर सपनों से प्यारा यानि सपना। क्योंकि स्वर्ग मे दुःख का नामनिशान नहीं है वहाँ तो सिर्फ पुण्य का फल भोगना है और पुण्य का फल भोगने में क्या कष्ट और सपना देखने में भी शरीर पर कोई जोर नहीं पड़ता आँख बंद कर लेते हैं, विश्राम कर रहे हैं और सपना देख रहे हैं इन दोनों कर्मों में कहीं पर पुरुषार्थ नहीं करना पड़ता। स्वर्ग में भी कोई पुरुषार्थ नहीं है। सब कुछ अचानक है यहाँ तक कि पानी का गिलास भी उठाकर नहीं पीना है भोजन भी नहीं करना है जब इच्छा हुई तभी झट से कंठ से अमृत झर जाता है, श्वाँस भी जल्दी-जल्दी नहीं लेना है 15 दिन में एक बार लेना है। हजार साल में एक बार श्वाँस ले ली। महानुभाव! स्वर्ग किसे पसंद नहीं होता है तो स्वर्ग और सपना दोनों अच्छे माने जाते हैं। किन्तु'' स्वर्ग से सुन्दर सपनों से प्यारा है अपना घर द्वार'' अपना घर द्वार यदि स्वर्ग जैसा बन जाये तो वह स्वर्ग से भी अच्छा और सपनों से भी प्यारा हो सकता है और अपने घर से प्यारा मैं समझता हूँ संसार में और कुछ है ही नहीं। ''East or west home is the best'' चाहे कहीं भी घूम आना चाहे कहीं भी चले जाना लौट कर के तो अपने ही बिल में घुसना पड़ेगा।

पूरब से पश्चिम में आये, पश्चिम से पूरब में आये।।
उत्तर से दक्षिण में आये, दक्षिण से उत्तर में आये।
लौटकर वे घर को आये, आकर माँ को वचन सुनाये।
देख लिया हमने जग सारा, अपना घर है सबसे प्यारा।

महानुभाव! चाहे कहीं भी भटक लेना, जगत भर में भटकना होता है और अपने घर में रहना होता है, किसी दूसरे के घर पर चाहे ससुराल में चले जाना २-४ दिन तो खातिरदारी होगी और ५वें दिन कहेंगे जीजाजी क्या बात है कोई काम नहीं है क्या? तुम तो यहाँ अड़कर के ही बैठ गये।

एक दिन के पाहुने दो दिन पई।
और तीन दिन रहे तो बेशरम सही।

अरे अब तो २-३ घंटे के लिए जाओ तो ही सही। पुराने जमाने में तो दो-तीन दिन रुक जाते थे और अब कोई रुक जाये तो, कह ही देंगे ससुराल वाले- घर में कोई काम नहीं है क्या? एक मेहमान ऐसे ही ससुराल में जाकर अड़ गये, जाने का नाम ही न लें तो उनकी साले की पत्नी सरेज वह सुबह चाय बनाने बैठी चूल्हे पर, लकड़ी सुलगाने के लिए माचिस जलाई और गाती जा रही थी-

चूल्हा मेरा रंग बिरंगा छह महीने में सुलगेगा।

और नंनदोई बैठा है बाजू में, उसको सुना-सुना कर कह रही है ननदोई ने एक बार, दो बार, चार बार सुना उससे रहा नहीं गया तो वह कहता है-

मेहमान मन का मौजी है वर्ष दिना में टिरकेगा।

महानुभाव! कहने का आशय यह है कि चाहे कहीं भी चले जाना चार दिन की चांदनी फिर अंधेरी रात। दो दिन तो खातिर अच्छी होगी तीसरे दिन टरका दिया जायेगा। इसलिए अपना घर सबसे प्यारा है, अतः अपना घर स्वर्ग बनाना है, आपको ही बनाना है नरक नहीं स्वर्ग । जिससे स्वर्ग जैसा सुख आप भी प्राप्त कर सकें। आज बस इतना ही अपनी वाणी को यहीं विराम देता हूँ।

"शांतिनाथ भगवान की जय"

मीठे प्रवचन

"माला और ताला"

साधक के लिए माला और श्रावक (गृहस्थ) के लिए ताला उपयोगी है किन्तु तभी जब माला में साधक का मन हो, गृहस्थ का ताला भी तभी सार्थक है जब उसमें धन हो, खाली मकान - कमरे का, सूटकेस, बॉक्स का ताला लगाना बेकार है यह उस वस्तु का व ताले का दुरुपयोग है। मन से रहित माला साधक के समय का दुरुपयोग है। मन सहित माला साधक को आत्मध्यानी व तत्त्वज्ञानी बनाती है। धन सहित ताला गृहस्थ को सत्पात्रदानी और स्वाभिमानी (सम्मानीय) बनाता है। माला से प्रभु सुमिरन होता है। गुरु उजाला (कृपादृष्टि) से समाधिमरण (सुमरण) व भवदधि तरन होता है। आज ताला धन पर नहीं मन, वचन व तन की प्रवृत्ति पर भी लगाना चाहिए ।

एलाचार्य वसुनंदी मुनि